कला कथा 7

अन्तर

2026

सहयोग राशि 50 रूपए

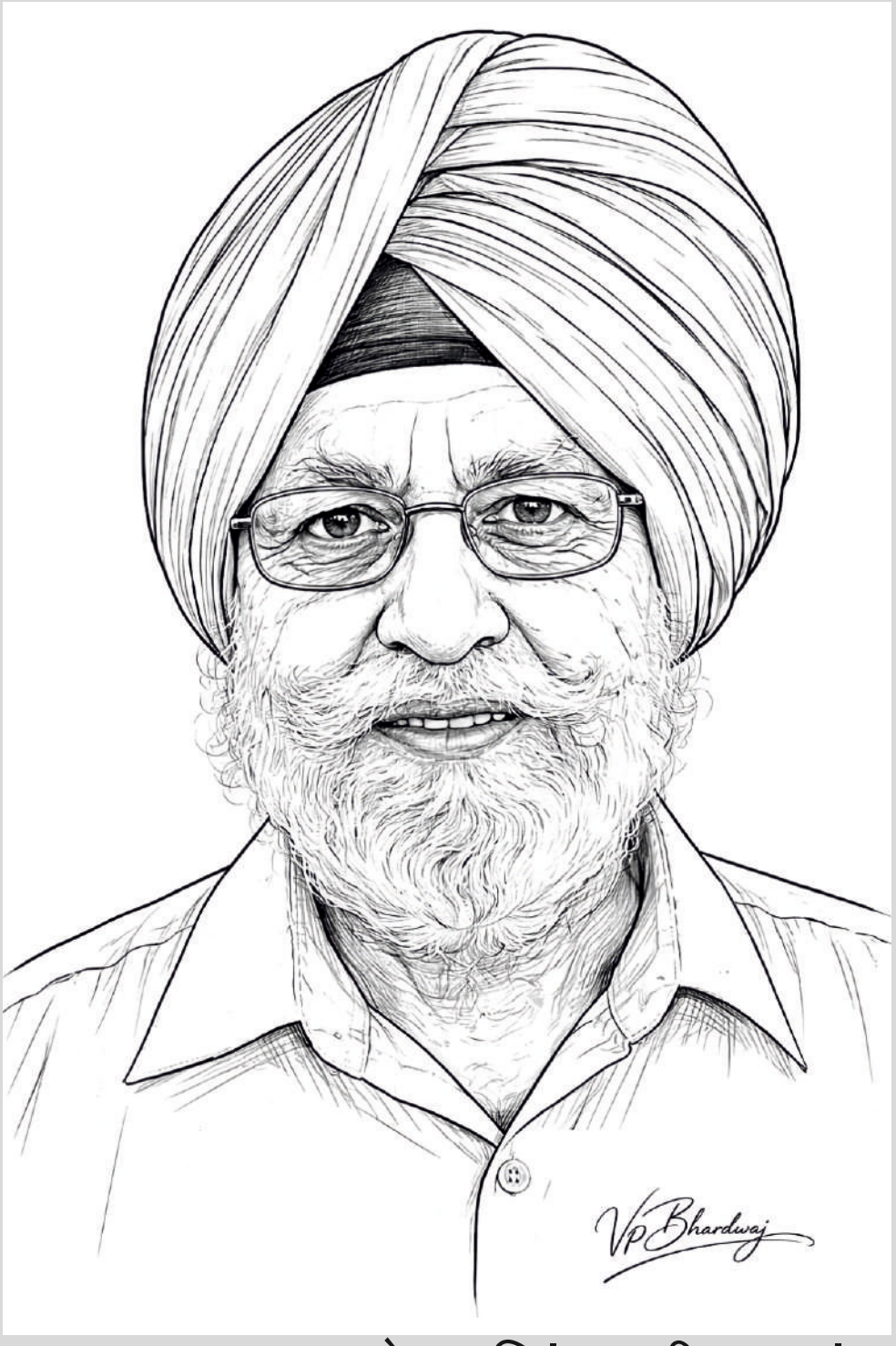
कला और कविता 6

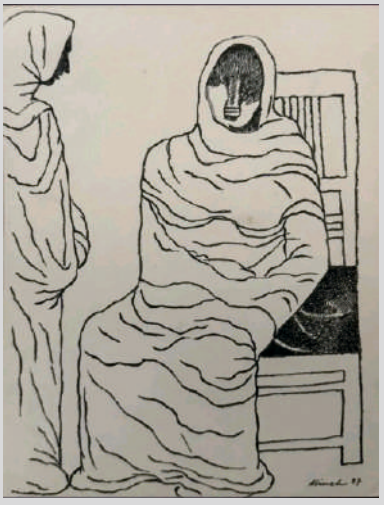
अलका भ्रुशुंडी 8

राजेंद्र कडिया 19

परिमल वाघेला 31

संपादक : डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज









प्रेम सिंह की ड्राइंग

आगामी पुस्तक

प्रश्नोत्तर

भारतीय कला

कुछ कुछ होता है

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

कला कथा # 7
मई 2026

सहयोग राशि एक अंक : 50 रूपए
सहयोग राशि 12 अंक : 600 रूपए

संपादक व प्रकाशक
डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज
पता : एफ–2/781 शालीमार गार्डन एक्स. 1
साहिबाबाद, उत्तर प्रदेश, 201001

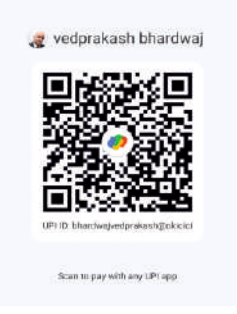
मो. 9871699401

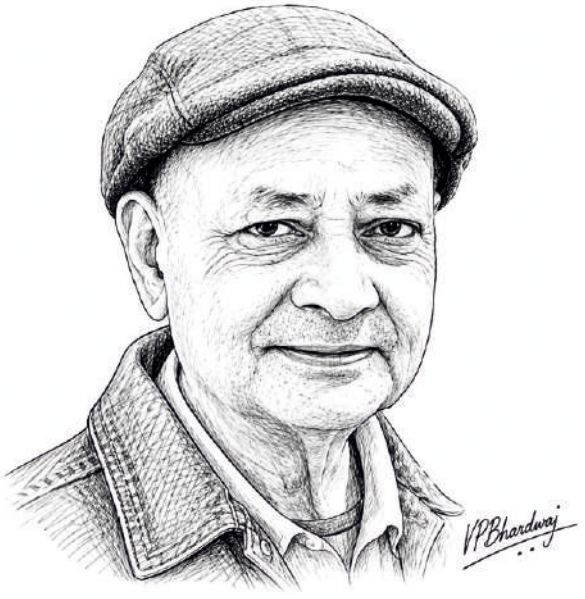
आपका सहयोग आवश्यक है

कला कथा पत्रिका का प्रकाशन गैर व्यावसायिक उद्देश्य से किया जा रहा है पर कोई भी पत्रिका प्रकाशित करने पर धन खर्च करना ही होता है।

कोई भी पत्रिका आर्थिक सहयोग के बिना जीवित नहीं रह सकती। यदि आप चाहते हैं कि कला कथा पत्रिका आप तक इसी प्रकार पहुंचती रहे, तो आप अपनी इच्छानुसार सहयोग के रूप में योगदान कर सकते हैं। हमारा गूगल पे नंबर 9871699401 है। आप चाहें तो क्यूआर कोड स्कैन करके भी सहयोग कर सकते हैं। हमें अपना नाम, मोबाइल नंबर, और ईमेल व्हाटसएप पर भेजें ताकि पत्रिका नियमित रूप से आप तक पहुंच सके।

संपादक





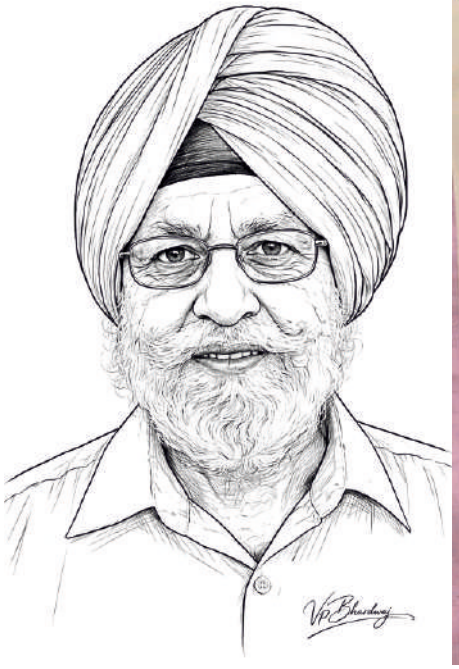
कला कथा का सातवां अंक आपके सामने प्रस्तुत है। यह अंक कुछ विलंब से आ पाया है। कला कथा का प्रकाशन प्रतिमाह करने का प्रयास है पर कई कारणों से ऐसा कर पाना संभव नहीं हो पा रहा है। इस अंक से कला और कविता का स्तंभ शुरु किया जा रहा है। अगला अंक जल्दी आपके पास पहुंचे, इसका प्रयास किया जाएगा।

डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज
संपादक
कला कथा

अनुक्रमणिका

1 प्रेम सिंह	3
2 कला और कविता	6
3 अलका भ्रुशुंडी	8
4 भारती वर्मा और रुचि चड्ढा	12
5 आशु शर्मा	16
6 एटेलियर मोर्लोट	18
7 राजेंद्र कडिया	19
8 डेविड हॉक्नी	21
9 परमजीत सिंह	25
10 सतीश गुजराल	28
11 परिमल वाघेला	31
12 सुमित्रा अहलावत	34
13 विमला आर्ट फोरम	36



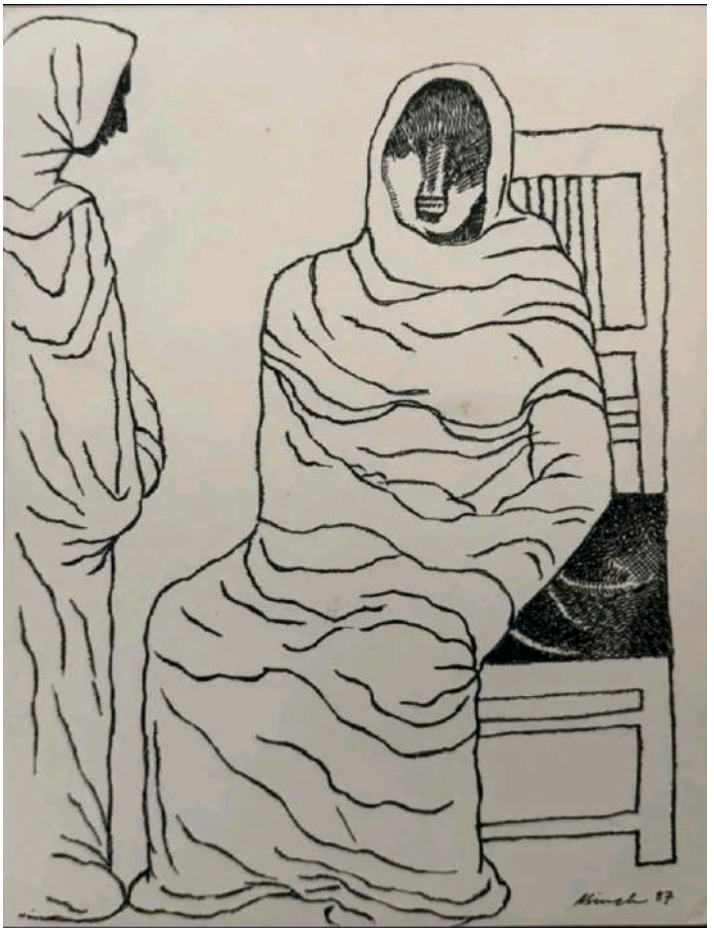




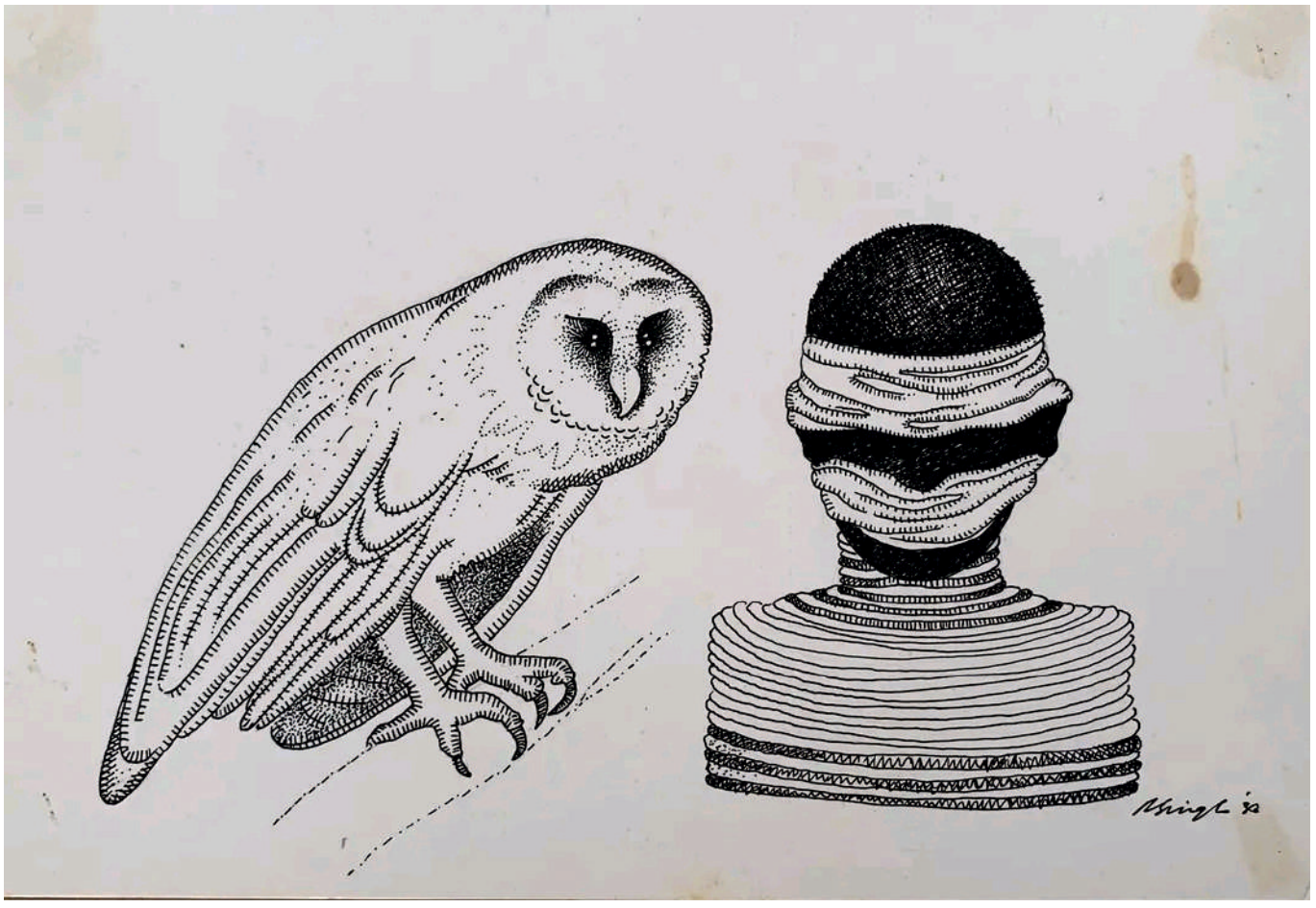
प्रेम सिंह की ड्राइंग

सामाजिक–सांस्कृतिक यथार्थ

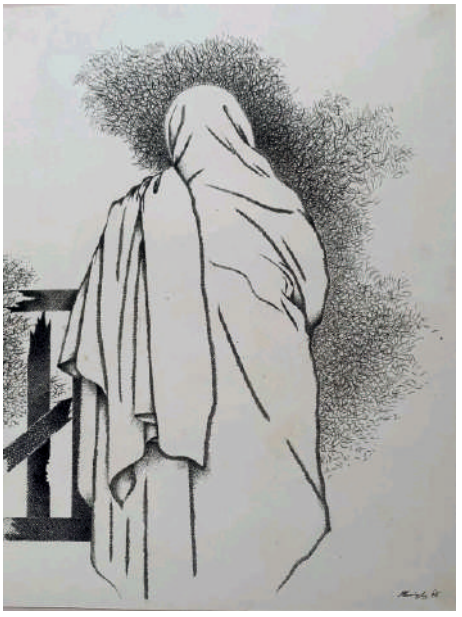
प्रेम सिंह की कला–यात्रा की जड़ें पंजाब के उनके गाँव और घरेलू परिवेश में गहराई से निहित हैं। यह प्रारंभिक अनुभव–संसार उनके कार्यों में केवल विषय के रूप में नहीं, बल्कि एक संवेदनात्मक आधार–भूमि के रूप में उपस्थित रहता है। उनके शुरुआती चित्रों में ग्रामीण स्त्रियाँ, उनका श्रम, उनकी दिनचर्या और उनके आसपास का सामाजिक–सांस्कृतिक वातावरण एक जीवंत यथार्थ के रूप में उभरता है। यह यथार्थवादी दृष्टि समय के साथ केवल दृश्य–चित्रण तक सीमित नहीं रहती, बल्कि सामाजिक संरचनाओं की अंतर्ध्वनियों को भी अभिव्यक्त करने लगती है। इसे उनकी बाद की अमूर्त पेंटिंग्स में भी देखा जा सकता है जिनमें उन्होंने रौशनी की चपल छवियों को रंगों में व्यक्त किया। रौशनी की इन चपल छवियों का एक संबंध पंजाब के ग्रामीण परिवेश में खेतों में लहलहाती फसलों और हवा के साथ बिखती उनकी चमक से भी देखा जा सकता है.



पेंटिंग के समानांतर प्रेम सिंह ने ड्रॉइंग को एक स्वतंत्र और स्वायत्त अभिव्यक्ति–माध्यम के रूप में विकसित किया है। उनकी लगभग पचास वर्षों की सतत साधना में रची गई हजारों ड्रॉइंग्स इस बात



का प्रमाण हैं कि उनके लिए ड्रॉइंग केवल प्रारूप (स्केच) नहीं, बल्कि विचार और संवेदना की एक पूर्ण और परिपक्व अभिव्यक्ति है। इन ड्रॉइंग्स में एक प्रकार की तात्कालिकता, सहजता और आंतरिक आवेग दिखाई देता है, जो कई बार पेंटिंग्स की अपेक्षा अधिक प्रत्यक्ष और तीव्र हो उठता है। उनकी चुनिंदा ड्राइंग्स की एक महत्वपूर्ण प्रदर्शनी 15 अप्रैल 2026 को दिल्ली के त्रिवेणी कला संगम स्थित आर्ट पिलग्रिम गैलरी में शुरु हुई है। इस प्रदर्शनी में उनकी 1984 के दंगों की त्रासदी पर अनेक ड्राइंग्स हैं जिनमें दंगों में स्त्रियों की वेदना के माध्यम से वह मानवीय वेदना को स्वर देते हैं। इन ड्राइंग्स में राजनीतिक और प्रशासनिक विफलताओं पर कटाक्ष भी है। इस प्रदर्शनी में उनकी शुरुआती दौर से लेकर वर्तमान तक की ड्राइंग्स शामिल हैं।



उनकी ड्रॉइंग्स का एक महत्वपूर्ण पक्ष स्त्री–संसार का निरंतर और बहुस्तरीय चित्रण है। यहाँ स्त्री केवल एक दृश्य आकृति नहीं, बल्कि एक सामाजिक उपस्थिति है, जिसकी भूमिका, सीमाएँ, संघर्ष और मौन, सभी एक साथ प्रकट होते हैं। विशेष रूप से चेहरों को ओझल रखना एक महत्त्वपूर्ण पहल और वैचारिक रणनीति के रूप में उभरता है। यह ओझलपन स्त्री की व्यक्तिगत पहचान के मिट जाने का संकेत भी हो सकता है, और साथ ही उसे एक सार्वभौमिक प्रतीक में रूपांतरित करने का प्रयास भी। इस तरह कलाकार व्यक्तिगत और सामूहिक के बीच एक जटिल संवाद स्थापित करता है।

उनकी रेखाओं का स्वरूप, गहरी, मोटी और गतिशील–केवल आकृति–निर्माण का साधन नहीं, बल्कि भाव और ऊर्जा का वाहक है। इन रेखाओं में एक प्रकार की बेचैनी, तनाव और गति है, जो चित्रित विषय की आंतरिक स्थिति को उजागर करती है। स्त्रियों के वस्त्रों पर दिया गया विशेष ध्यान केवल सौंदर्यपरक नहीं, बल्कि सामाजिक संकेतों से भी जुड़ा हुआ है –





वस्त्र यहाँ पहचान, स्थिति और सांस्कृतिक संदर्भों के प्रतीक बन जाते हैं।

स्त्री–केंद्रित रचनाओं के साथ–साथ प्रेम सिंह की ड्रॉइंग्स में व्यापक सामाजिक, राजनीतिक और व्यवस्थागत संकटों का भी सशक्त और तीखा चित्रण मिलता है। यहाँ कलाकार एक सजग साक्षी के रूप में सामने आता है, जो अपने समय की विडंबनाओं, विसंगतियों और असंतुलनों को दर्ज करता है। कई रचनाओं में व्यंग्य का स्वर उभरता है, जो न केवल आलोचनात्मक दृष्टि को प्रखर बनाता है, बल्कि दर्शक को भी आत्म–चिंतन के लिए प्रेरित करता है।



कोविड लॉकडाउन के दौरान निर्मित उनकी इंक और कोलाज आधारित ड्रॉइंग्स इस बात का उदाहरण हैं कि कलाकार बदलती परिस्थितियों के साथ अपने माध्यम और भाषा को भी रूपांतरित करता है। इन कार्यों में मनुष्य की मानसिक और भावनात्मक अवस्थाओं – एकांत, भय, अनिश्चितता और विखंडन – का गहन और संवेदनशील चित्रण मिलता है। कोलाज का प्रयोग यहाँ विखंडित यथार्थ को व्यक्त करने का एक सशक्त उपकरण बन जाता है।

प्रेम सिंह स्वयं कहते हैं, "मेरे लिए कला अत्यंत महत्वपूर्ण है, यह मेरे भीतर की आवाज को एक दृश्य रूप देती है।" इस 'भीतर की आवाज' की संरचना बहुस्तरीय है – इसमें उनके बचपन का पंजाब, ग्रामीण जीवन के अनुभव, और साथ ही 1984 के दंगों की त्रासद स्मृतियाँ भी शामिल हैं, जब सिख समुदाय को हिंसा का सामना करना पड़ा था। इस प्रकार उनकी कला केवल व्यक्तिगत अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि स्मृति, इतिहास और सामाजिक यथार्थ के अंतर्संबंधों का एक जटिल ताना–बाना बन जाती है। इस परिप्रेक्ष्य में प्रेम सिंह की ड्रॉइंग्स को एक ऐसी दृश्य–भाषा के रूप में देखा जा सकता है, जो अतीत और वर्तमान के बीच एक सेतु का कार्य करती है। यह सेतु केवल स्मरण का नहीं, बल्कि आत्म–चिंतन, पुनर्समीक्षा और पुनर्निर्माण का भी है– जहाँ कलाकार अपने अनुभवों को पुनः देखता, परखता और उन्हें एक नए अर्थ–क्षेत्र में रूपांतरित करता है।

–डॉ वेद प्रकाश भारद्वाज

कला और कविता

मौन की यात्रा / डॉ वेद प्रकाश भारद्वाज

(विजयराज बोधनकर की पेंटिंग को देखते हुए)



विजयराज बोधनकर की एक पेंटिंग

रंगों के साथ
दृष्टि की चपलता
और कल्पनाओं की
हलचल के बीच
जो कुछ घट रहा है
कैनवास पर
दृश्य और भाषा की
सीमाओं को तोड़ते हुए
एक मौन
गूंजता है अंतरमन में
दृश्य और अदृश्य के बीच कहीं
ठहरा रहता हूँ देर तक
और फिर निकल पड़ता हूँ
उस यात्रा पर जिसमें
ध्वनि है स्मृतियों की
सपनों की
कल्पनाओं की
और उस अज्ञात को
पाने की आकांक्षा
जो किसी भी
रूप और अर्थ से परे है।

अमूर्त कला को देखते हुए/ डॉ वेद प्रकाश भारद्वाज

(एक)
एक पेंटिंग
एक शिल्प
या कुछ और

कला
सिर्फ वह नहीं होती
जिसे देखते हैं हम
कला देखती है चुपचाप
हमें देखते हुए

कला सिर्फ
भावनाओं या विचारों की
अभिव्यक्ति नहीं है
वह कोशिश है
उस भीतरी दुनिया को
दिखाने की
जिसमें हमारे सपने
इच्छाएँ, और
वह तमाम बातें हैं
जिन्हें छुपा रखा है
न चाहते हुए भी
किसी अज्ञात भय से

कैनवास पर
पत्थर पर
धातु पर
हर निशान
स्मृतियों का वाहक है
हर रेखा
उस पल की याद है
जो खो गया है
ऐसा हमने सोचा था

कैनवास पर देखो
यह जो रंगों के थक्के हैं
सपनों के
इच्छाओं के
थके पैरों के निशान हैं

कभी कोई यहाँ था
खड़ा हुआ
ललक और संशय से भरा
चला गया है
अपने काँपते पांवों के साथ
निशान छोड़कर
कौन था वह !
कोई और
या तुम खुद !

एक संशय के साथ
अयाचित सपनों
इच्छाओं की
अधूरी परतों को
छोड़ गया है कोई
बिना कोई आकार दिये
अदृश्य... अदृश्य..... अदृश्य
जिंदगी के निशान।

(दो)
कला याद रखती है
वह सब
जो लोग भूल जाते हैं
वह तमाम कहानियाँ
जिन्हें चुप करा दिया गया
छुपा दिया गया
खामोशी में

वह भावनाएँ जिन्हें
कोई सुरक्षित जगह न मिली
कभी भी
वह विचार
जो इतने भारी थे
कि दबा रहा मन
उनके बोझ से
अचानक
कैनवास पर
हल्के लगने लगते हैं
रंगों की तरह।



विश्लेषण / डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज



अथाह की थाह में अलका की कला

अलका भ्रुशुंड़ी की कला यात्रा में अमूर्तन के प्रवेश के साथ ही उसमें वैचारिक और दार्शनिक तत्व प्रमुख होने लगे। खगोलीय संरचनाओं के साथ संवाद करते हुए उन्होंने अपनी भाषा तैयार की और एक ऐसा यात्रा शुरु की जो अनंत है। अथाह ब्रह्मांड की तलाश के बहाने मानव अस्तित्व की तलाश करती उनकी कला लोगों को सहज ही आकर्षित कर लेती है।

जिस ब्रह्मांड का हम एक हिस्सा हैं, वह बहुत बड़ा, अनंत है और हमेशा खुलता रहता है। इस बड़े और अनजान फैलाव में, इंसानी जिंदगी खुद एक पहेली बन जाती हैकृगहरी, परतों वाली और कभी पूरी तरह समझ में न आने वाली। अलग–अलग सभ्यताओं और समय में, कलाकारों ने इस रहस्य को देखने और दिखाने के लिए यथार्थ आकारों से लेकर अमूर्त संरचनाओं तक का सहारा लिया है। कला वह सब दिखाने का प्रयास करती है जो सामान्य दृष्टि से दिखाई नहीं देता। इस तरह कला देखने का विस्तार है जो कभी यथार्थ रूप में तो कभी प्रतिकात्मक रुप में हमारे सामने आता है। कला दिखने और न दिखने वाली, सीमित और अनंत के बीच एक पुल बन जाती है। अलका भ्रुशुंडी की कला इसी सोच से निकलती हैरू असीम को समझने की एक लगातार और ध्यान लगाने वाली कोशिश।

उनका सफर पुणे में शुरू हुआ और नई दिल्ली में लगभग तीन दशकों से जारी है, जहाँ उनकी कला की भाषा लगातार विकसित हुई है। शुरू अलका की कला साधना का आधार पहचाने जाने वाले जीवन के आकारों तक सीमित रहा। वह उस समय एक तरह से खुद को खोज रही थीं। इस खोज का विस्तार हुआ जब उन्होंने ब्रह्मांड में मानव की भौतिक और दार्शनिक उपस्थिति से संबंधित सवालों के जवाब तलाशने शुरु किये। इस तरह उनकी कला, जो आकारिक संरचनाओं और भित्ति चित्र व लोक कलाओं जैसे रूपों में विस्तारित रही, उस अनंत की थाह लेने निकल पड़ी, जो किसी भी कलाकार के लिए एक रहस्य है, और चुनौती भी। समय के साथ, उनकी खोज गहरी होती गई। जो ठोस था, वह अमूर्त हो गयाय तय आकार सुझाव में बदल गए। जो रूप की खोज के तौर पर शुरू हुआ, वह धीरे–धीरे बिना रूप के अथाह में डूबने में बदल गया। आज, उनका काम एक ऐसी जगह पर है जहाँ कोई भी रूप पूरा या स्थिर नहीं लगता। सब कुछ बदलाव में लगता हैकृकंपायमान, घुलता हुआ, फिर से उभरता हुआ। अमूर्तन की ओर यह प्रत्यावर्तन सिर्फ सौंदर्यानुभूति नहीं है अपितु उससे अधिक दार्शनिक स्थिति है जिसमें अनंत को, अथाह को किसी एक सीमा या रूप में बांधने की बजाय उसके विस्तार और गहनता के आयामों को अभिव्यक्त करना मुख्य उद्देश्य है।

दो दशक से अधिक समय से अलका भ्रुशुंडी अपनी कला में इस अनंत और अथाह ब्रह्मांडीय संरचना की आधार उसकी ऊर्जा, उसकी गति, और लय के संतुलन की तार्किक स्थिति को अलग–अलग तरह से देखने–दिखाने का प्रयास कर रही हैं।

उस चीज से जुड़ी हुई हैं जिसे अनंत का स्ट्रक्चर कहा जा सकता हैकृउसकी एनर्जी, उसकी रिदम और उसका छिपा हुआ लॉजिक। उनके कैनवस उस चीज को दिखाने की कोशिश करते हैं जिसे सीधे देखा नहीं जा सकतारू कॉस्मिक एनर्जी और इंसानी चेतना के बीच का डायनामिक रिश्ता। यह रिश्ता इतना गहरा है कि इसे बताया नहीं जा सकता, फिर भी इसे गहराई से महसूस किया जा सकता है। यह कहानी के तौर पर नहीं बल्कि एहसास के तौर पर, दिखाने के तौर पर नहीं बल्कि गूंज के तौर पर महसूस किया जाता है।

ब्रह्मांडीय ऊर्जा की खोज ने लंबे समय से अलग–अलग संस्कृतियों के कलाकारों को व्यस्त रखा है। भारतीय चित्रकला परंपराओं में, तांत्रिक कला इस बात का एक सशक्त उदाहरण देती है कि कैसे ज्यामितीय आकार, रंग और प्रतिकात्मक अमूर्तन आध्यात्मिक समझ के जरिया बन सकते हैं। ये काम सिर्फ ब्रह्मांड को नहीं दिखातेय वे ध्यान लगाने वाले डायग्राम के तौर पर काम करते हैं, जो अंदरूनी और बाहरी एनर्जी के बीच के तालमेल को दिखाते हैं। पश्चिमी आधुनिकता ने असलियत से आगे बढ़ने के तरीके के तौर पर अमूर्तन को अपनाया। हिल्मा अफ क्लिम्ट के आध्यात्मिक अमूर्तन से लेकर मार्क रोथको के चमकदार कलर फील्ड्स तक, कलाकारों ने बार–बार ब्रह्मांड की अनंत व अथाह ऊर्जा के साथ ही मानवीय जीवन की अथाहता को खोजने और अभिव्यक्त करने का प्रयास किया है। मानव मन और मस्तिष्क भी ब्रह्मांड की तरह अथाह है जिसे कभी कोई पूरी तरह देख और समझल नहीं सका है। इसीलिए कलाकार इस स्थिति को व्यक्त करने के लिए अप्रतिनिधित्व को चुनते हैं। अमूर्तन इस अथाह सृष्टि और जीवन को देखने–समझने के लिए एक भाषा बन जात है।

अलका भ्रुशुंडी इसी अमूर्तन को अपनी कला में कई तरह से बरतती हैं, उसकी नवीन संभावनाओं को खोजती हैं। ब्रह्मांडीय ऊर्जा एक कलाकार के सामने चुनौती प्रस्तुत करती है। इस ऊर्जा का कोई स्थिर और स्थाई रुप नहीं है। यह ऊर्जा निरंतर प्रवाहित होते हुए अपना रुप बदलती रहती है। इसीलिए यह अथाह है। अलका भ्रुशुंडी इस चुनौती को स्वीकार करती हैं और ठोस रूपों को छोड़ देती हैं। आकार को छोड़कर वह संरचना में व्याप्त तनाव और संवेदना को, हल्के और गहरी रंगों की आभा से एक नया आयाम देती हैं। अलका के लिए आकार की अनुपस्थिति का अर्थ जीवन की अनुपस्थिति नहीं है, अपितु आकार में न होने से जीवन अधिक संभावनाशील हो जाता है। उनके काम ब्रह्मांडीय ऊर्जा और आत्मा की अंदरूनी ताकत के बीच बहुआयामी अंतरसंबंध को दिखाने के साथ ही भौतिक और अभौतिक के बीच के तनाव को भी दिखाते हैं। वे बताते हैं कि जिंदगी सिर्फ दिखने वाली, भौतिक ताकतों से नियंत्रित नहीं होती। सतह के नीचे एक अदृश्य ऊर्जा निरंतर प्रवहमान रहती हैकृ मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिकता के रूप में जो मानव अस्तित्व को बहु–अस्तित्ववादी रुप देते हैं। हर इंसान अपने अंदर द्वैत रखता हैरू भौतिक शरीर के साथ आंतरिक स्तर पर अदृश्य ऊर्जा जो जीवन को गतिशील रखती है। अलका भ्रुशुंडी कला के माध्यम से इस अनदेखी ऊर्जा की जीवनदायी शक्ति को दृश्य रूप में रूपांतरित करने की कोशिश करती है।

कैनवस और पेपर पर, रंग, बुनावट और रंगों की मुद्राएं अथाह











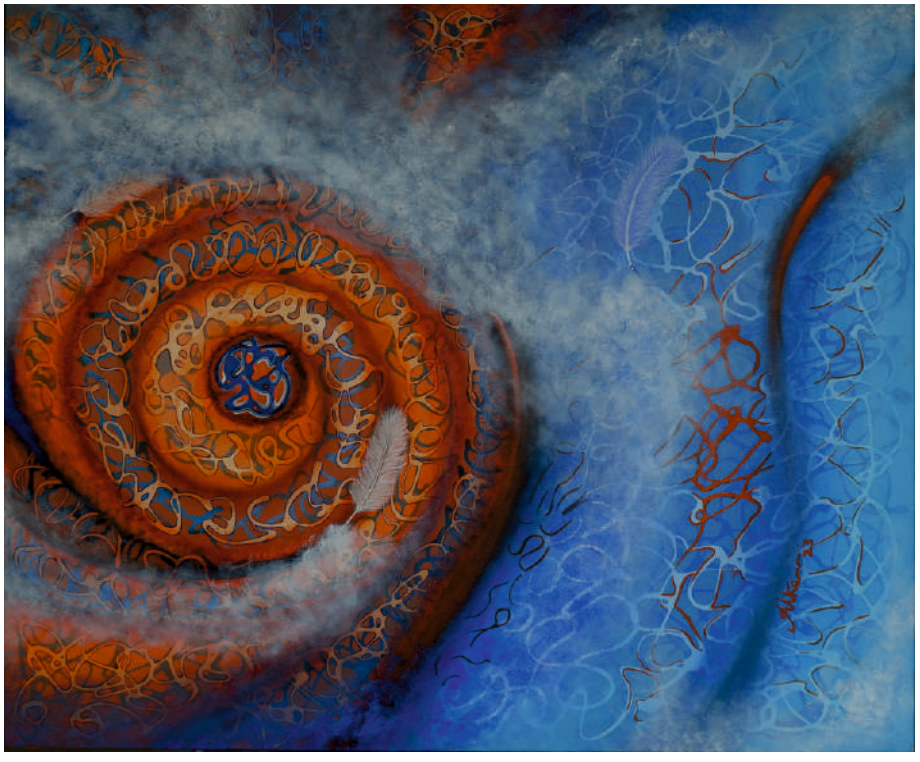
जीवन को जानने के साधन बन जाते हैं। हल्के, मुलायम ब्रशस्ट्रोक अक्सर संवेदनशीलता, लयात्मकता, सहअस्तित्व की कोमलता जैसी भावनाओं को सामने लाते हैं। इसके उलट, बोल्ड स्ट्रोक और रंगों के घने पैच ताकत, पक्का इरादा और तेजी दिखाते हैं। ये अलग–अलग संकेत एक ही दृश्य क्षेत्र में एक साथ होते हैं, जिससे एक ही समय में सृष्टि में तनाव और तालमेल, दोनों का अस्तित्व एकसाथ उपस्थित दिखाई देता है। देखने वाले को रंगों की सतहों के अंदर एक लय महसूस होती हैकृसंगीत के ताल की तरह।

जैसे हम प्रतिक्षण एक नया जीवन जीते हैं, प्रकृति जैसे हर पल अपना रंग बदलती रहती है, अलका की रचनाओं मे संयोजन के स्तर पर निरंतर परिवर्तन और गतिशीलता का आभास होता है। रंग की एक परत पर दूसरी परत जमा होती जाती हैं, जो गहराई का एहसास कराती हैं, लेकिन उसे बताती नहीं हैं। ब्रश के लयात्मक निशान सतह पर मूवमेंट पैदा करते हैं, और दर्शक चित्र के एक सिरे से दूसरे सिरे तक सहजता से पहुंच जाता है। दर्शक के लिए यह अनुभव एक ऐसी यात्रा में बदल जाता है जिसमें वह स्वयं को लगातार ऊर्जावान महसूस करता है। चित्र में सतह पर जैसे ऊर्जा निरंतर बहती है, थिरकती है और अपना रूप बदलती रहती है जो देखने वालों पर एक जादुई प्रभाव डालता है। इसीलिए अलका के काम गहराई और धैर्य से देखने की मांग करते हैं। जब कोई दर्शक उनकी रचनाओं को देर तक देखता है तो उसे लगता है जैसे उसके सामने कुछ लगातार घटित हो रहा है। कैनवस एक जिंदा जगह में बदल जाता है, जहां मानवीय चेतना और ब्रह्मांडीय ऊर्जा के बीच एक जीवंत संबंध का आभास होता है।

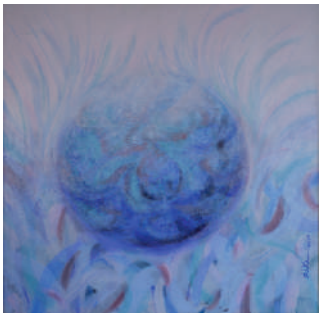
उनके काम में नीले रंग का ज्यादा होना खास मायने रखता है। कलाकार के अनुसार, नीला रंग अनंतता, शांति और अनदेखी चीजों को खोजने का एक जरिया है। उनके लिए, नीला रंग सिर्फ एक रंग नहीं बल्कि एक अनंत अनुभव हैकृएक मनोवैज्ञानिक और आध्यात्मिक अनुभव का द्वार। समुद्र की गहराई से लेकर आसमान की विशालता तक, पानी की शांति से लेकर बर्फ से ढके पहाड़ों तक, नीला रंग हर जगह फैला हुआ है। यह शांति, अपनेपन और विचारों के लगातार बहाव को दिखाता है जो मन को अनंत की ओर ले जाता है।

नीले रंग के साथ, नारंगी और लाल रंग के शेड अक्सर उनकी रचनाओं में दिखाई देते हैं, जो एनर्जी, जिंदादिली और संभावना की निशानी हैं। कुछ काम समुद्र की अथाह गहराई को दिखाते हैं, जबकि दूसरे अंतरिक्ष के बेहिसाब फैलाव का सुझाव देते हैं। गतिशील लाइनों की जाल जैसी स्थिति इंसानी रिश्तों की भावनात्मक जटिलता को दिखाते हैं। पंख जैसी बनावटें अक्सर उभरती हैं, जो इंसानियत की असीम इच्छाओं और ऊपर की ओर बढ़ती चेतना की निशानी हैं।

समग्र रूप में, अलका भ्रुशुंडी की कला एक ऐसा दायरा बनाती है जो दिखने से परे अनुभव तक फैला हुआ है। यह हमें याद दिलाता है कि, ब्रह्मांड की तरह ही, इंसान भी अनंत संभावनाओं से भरा हैकृऔर कला उस अनंतता को छूने का एक तरीका है।







विश्लेषण / डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

सतह और गहराई के बीच

भारती वर्मा और रुचि चड्ढा की प्रदर्शनी

मुंबई की जहांगीर आर्ट गैलरी में सतह और गहराई के बीच (बिटविन सरफेस एंड डेप्थ) शीर्षक से 3 से 9 मार्च 2026 तक एक द्वि–कलाकार प्रदर्शनी आयोजित की गई, जिसमें दिल्ली की समकालीन कलाकार भारती वर्मा और रुचि चड्ढा के कार्य प्रदर्शित किये गये। लगभग तीन दशकों से सक्रिय इन दोनों कलाकारों ने अपनी–अपनी विशिष्ट, किंतु दार्शनिक रूप से एक–दूसरे से संवाद करती हुई दृश्य–भाषाएँ विकसित की हैं। उनके कार्य मानव अनुभव, प्रकृति के दर्शन और अस्तित्व की बहुस्तरीयता को गहन चिंतनशील चित्रात्मक दृष्टिकोण से व्यक्त करते हैं।

प्रदर्शनी का शीर्षक केवल एक रूपक नहीं है, यह दोनों कलाकारों की कलात्मक प्रक्रियाओं के साझा वैचारिक आधार को व्यक्त करता है। सतह और गहराई–रूप और अरूप–दृश्य और अदृश्य–ये द्वैत इस प्रदर्शनी के संयोजन की अवधारणा को संरचित करते हैं। इन ध्रुवों के बीच ही जीवन की सतत गति और प्रवाह प्रकट होता है।

प्रकृति अपनी बाहरी अभिव्यक्ति में विस्तृत और खुली प्रतीत होती है, किंतु भीतर से वह परतदार और रहस्यमयी है। यही गतिशीलता मानव जीवन को भी आकार देती है। मनुष्य, स्त्री हो या पुरुष– अनेक स्तरों में जीता है, जहाँ वह निरंतर सामाजिक संरचनाओं और अपनी आंतरिक चेतना के बीच संतुलन स्थापित करता है। दृश्य और अदृश्य के इसी अंतःसंवाद को दोनों कलाकार अपनी विशिष्ट कलात्मक भाषाओं में प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करती हैं।

रुचि चड्ढा कमल और जल के भीतर की दुनिया की छवियों के माध्यम से जीवन के दार्शनिक विस्तार को तलाशती हैं, जबकि भारती वर्मा मानव शरीर की सांकेतिक अभिव्यक्तियों के माध्यम से आंतरिक अनुभव के भूगोल को उद्घाटित करती हैं। इस प्रकार दोनों कलाकारों के कार्य बाह्य प्रकृति और आंतरिक सत्य के बीच एक गहन संवाद स्थापित करते हैं।

मानव का आंतरिक भूगोल

भारती वर्मा की चित्रकृतियों में मानव आकृतियाँ केंद्रीय उपस्थिति रखती हैं– किन्तु वे किसी यथार्थवादी या चित्रात्मक रूप में नहीं दिखाई देतीं। यहाँ मानव शरीर एक वर्णनात्मक रूप नहीं, बल्कि एक प्रतीकात्मक संरचना के रूप में उभरता है। अनेक चित्रों में चेहरे अनुपस्थित, ढँके हुए या अस्पष्ट दिखाई देते हैं। यह केवल एक शैलीगत निर्णय नहीं, बल्कि एक सामाजिक स्थिति की ओर संकेत है।

अनेक सामाजिक संदर्भों में व्यक्ति की स्वतंत्र पहचान पूर्वनिर्धारित भूमिकाओं और अपेक्षाओं के भीतर सीमित हो जाती है। ऐसे में अस्पष्ट या छिपा हुआ चेहरा एक ऐसे अस्तित्व का रूपक बन जाता है जो दिखाई भी देता है और मिटा हुआ भी प्रतीत होता है।

उनकी रचनाओं में शरीरों का झुकाव, मोड़ और आपसी उलझाव केवल शारीरिक गति का संकेत नहीं देते, बल्कि मानसिक और सामाजिक दबावों को भी व्यक्त करते हैं। झुके हुए और एक–दूसरे में गुंथे हुए शरीर संकुचित भावनाओं और जीवन के अनुभवों का भार वहन करते हुए दिखाई देते हैं।

भारती के यहाँ आकृतियाँ अक्सर अकेले नहीं होतीं। वे एक–दूसरे से जुड़ी हुई, आच्छादित और कभी–कभी एक–दूसरे में विलीन होती हुई दिखाई देती हैं। यह दृश्य संरचना साझा अनुभवों का संकेत देती है। मनुष्य का संघर्ष भले ही व्यक्तिगत



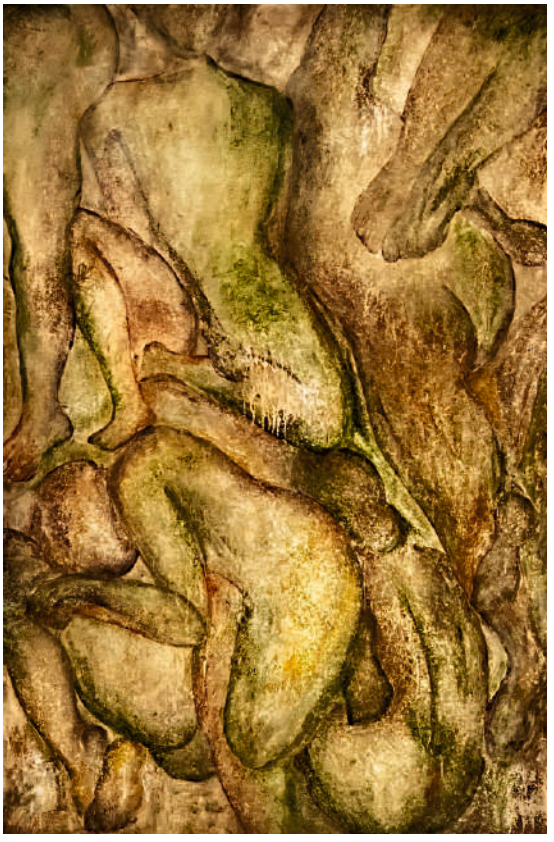
भारती वर्मा



रुचि चड्ढा







भारती वर्मा की रचनाएँ

प्रतीत हो, पर वह सामूहिक भी है। एक–दूसरे को सहारा देते, झुकते और घुलते हुए शरीरों के माध्यम से व्यक्तिगत अस्तित्व एक व्यापक सामाजिक स्थिति में परिवर्तित हो जाता है।

उनकी सीमित रंग–योजनाकृजिसमें धूसर, गहरे काले और खनिज नीले रंग प्रमुख हैं, चित्रों के भावनात्मक वातावरण को और अधिक तीव्र बना देती है। एकरंगी प्रभाव एक प्रकार की निस्तब्धता और गंभीरता का अनुभव कराता है। रंगों की परतें और बनावट कैनवास को रहस्यमय और लगभग पहेली जैसा बना देती हैं। दर्शक को कोई तात्कालिक अर्थ नहीं मिलता, उनकी रचनाओं को समझने के लिए धैर्य और आत्ममंथन की आवश्यकता होती है।

अंततः ये चित्र केवल दृश्य प्रस्तुति से आगे बढ़कर ऐसे स्थल बन जाते हैं जहाँ स्मृति, सहनशीलता, संवेदनशीलता और आत्म–अन्वेषण एक साथ उपस्थित होते हैं। यहाँ शरीर अपनी स्थिर लैंगिक पहचान से आगे बढ़कर साझा मानवीय अनुभव का एक माध्यम बन जाता है।

<u>जल, जीवन और खिलने की आकांक्षा</u>

रुचि चड्ढा की कलात्मक प्रक्रिया में कमल एक केंद्रीय रूपक के रूप में उपस्थित है, किंतु यह केवल पारंपरिक पवित्रता या आध्यात्मिक जागरण का प्रतीक नहीं रह जाता। वे केवल उस पुष्प पर ध्यान केंद्रित नहीं करतीं जो जल की सतह से ऊपर खिलता है, बल्कि उनका ध्यान उस अदृश्य संसार की ओर भी जाता है जो जल की सतह के नीचे मौजूद है।

उनके कैनवासों में डूबे हुए कमल के तने, जलीय पौधे, मछलियाँ और जल के भीतर की मद्धिम रोशनी दिखाई देती है। कुछ रचनाओं में कमल मानो जल के भीतर ही खिलता हुआ प्रतीत होता है, जिससे पारंपरिक स्थानिक धारणाएँ उलट जाती हैं। यह उलटाव एक गहरा विचार प्रस्तुत करता हैकृविकास केवल ऊपर उठने की प्रक्रिया नहीं है, वह भीतर की गहराइयों में उतरने की यात्रा भी है।

आधा खिला हुआ कमल उतना ही अर्थपूर्ण है जितना पूर्ण रूप से खिला हुआ फूल। आधा खिला कमल संभावना, बनने की प्रक्रिया और प्रतीक्षा का संकेत देता है, जबकि पूर्ण विकसित पुष्प परिपूर्णता और आत्मविश्वास को व्यक्त करता है। इस द्वैत के माध्यम से कलाकार यह दर्शाती हैं कि जीवन कोई अंतिम अवस्था नहीं, बल्कि एक निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है।

उनके चित्रों में जलीय तत्व केवल सजावटी नहीं हैं, वे उस पारिस्थितिक तंत्र का निर्माण करते हैं जो कमल को जीवन प्रदान करता है। कलाकार संकेत देती हैं कि सौंदर्य अकेले उत्पन्न नहीं होता, वह अदृश्य पारस्परिक संबंधों के भीतर जन्म लेता है। यह दृष्टि समकालीन पारिस्थितिक चेतना से गहराई से जुड़ती है, जहाँ प्रकृति को सह–अस्तित्व के एक जटिल संबंध के रूप में देखा जाता है।

प्रकाश और छाया का उपयोग भी चित्रों के दार्शनिक आयाम को और गहरा करता है। नीचे की मद्धिम गहराइयाँ और ऊपर की अपेक्षाकृत उजली सतह चेतना के एक रूपक का निर्माण करती हैं– अंधकार से प्रकाश की ओर एक यात्रा। कमल के तने का ऊपर उठना एक शांत किंतु सशक्त प्रतीक बन जाता है– संकटों के बीच भी आत्मोर्ध्वगमन की क्षमता का।

इस प्रकार कमल केंद्रित ये चित्र केवल सौंदर्य का उत्सव नहीं हैं, बल्कि परस्पर संबंध, धैर्य और अंधकार से प्रकाश की ओर जीवन की यात्रा पर एक गहन चिंतन प्रस्तुत करते हैं।

जब इन दोनों कलाकारों के कार्यों को साथ देखा जाता है, तो उनके बीच एक गहन समानांतर संबंध दिखाई देता है। एक कलाकार जल की गहराइयों के माध्यम से जीवन के दर्शन को रूप देती है, जबकि दूसरी कलाकार प्रतीकात्मक रुप में मानव शरीर के माध्यम से भावनात्मक और अस्तित्वगत अनुभवों का मानचित्र तैयार करती है। एक ओर कमल अंधकार से प्रकाश की ओर उभरता है, दूसरी ओर मौन मानव आकृतियाँ अस्पष्टता के भीतर अपनी पहचान की तलाश करती हैं।

दोनों ही कलात्मक प्रक्रियाओं में दृश्य सतह धीरे–धीरे एक आंतरिक परिदृश्य में बदल जाती है। रूप धीरे–धीरे सार में विलीन हो जाता है, मौन अपनी आवाज प्राप्त करता है, और सौंदर्य अपने भीतर संघर्ष की कथा को समेटे रहता है। इसी प्रकार बाहरी प्रकृति और आंतरिक चेतना के बीच का संवाद इस प्रदर्शनी की भावना को परिभाषित करता है। यहाँ कला केवल देखने की वस्तु नहीं रह जाती, वह चिंतन का माध्यम बन जाती है–जीवन को उसकी पूर्णता, जटिलता और शांत धैर्य के साथ अनुभव करने का एक आमंत्रण बन जाती है।











प्रीति की रचनाएँ

आशु शर्मा के पहाड़



कला अनुभव का विस्तार है। एक कलाकार अपने अनुभवों को अपने संज्ञान और विवेक से एक दृश्य भाषा में प्रस्तुत करता है। कई वर्ष तक लगातार पहाड़ों की दुर्गम चोटियों के साथ जीते हुए आशु शर्मा ने अपने अनुभवों को कैमरे में कैपचर किया और बाद में उन्हीं अनुभवों को चित्र की भाषा में प्रस्तुत करना शुरू किया। उनकी एकल प्रदर्शनी 'माउंटेन मेटाफर' पिछले दिनों दिल्ली में इण्डिया हेबीटेट सेंटर की कान्वेंशन फॉयर गैलरी में हुई। इस प्रदर्शनी की खास बात यह थी कि इसमें ज्यादा काम ब्लैक एन्ड व्हाइट थे। कुछ काम कलर इंक और पेस्टल के भी थे, पर उनके काली स्याही से, और पेन से बनाए काम अधिक प्रभावित करते हैं। इन कामों में पर्वतों की ऊंचाई और भव्यता के साथ ही रहस्यमयता और दार्शनिक पक्ष भी उभर कर सामने आता है।

आशु की रचना प्रक्रिया दो स्तर पर सक्रिय कही जा सकती है। एक स्तर वह है जिसपर वह पहाड़ों के भौतिक अस्तित्व को एक आकार के रूप में रचते हैं। इसमें चित्र में हमें पहाड़ की आकारिक संरचना का बोध होता है। कागज पर पेन एंड इंक के उनके कामों में वह पहाड़ के भौतिक रुप में हल्की और भारी रंगत के प्रभाव को दो भिन्न टोन्स से सामने लाते हैं। पहाड़ों के कटाव और उन पर जैविक अस्तित्व का आंशिक प्रभाव भी इन चित्रों में दिखाई देता है। उनके रचनाकर्म का दूसरा स्तर वह है जहां वह पहाड़ को एक रुपक में बदल देते हैं, पर शाब्दिक अर्थ में नहीं। वह पहाड़ को जीवन के रूपक में परिवर्तित कर देते हैं।

जीवन जो अपनी विविधता से हमेशा रोमांचित करता है, पहाड़ के रूपक के रूप में और अधिक रोमांचक हो जाता है। इसका उत्कर्ष हमें आशु की उन रचनाओं में मिलता है जिनमें वह ब्रश और स्याही से चित्र को आकार देते हैं। पहाड़ जैसे स्थिर व ठोस दृश्य को वह अमूर्तन के साथ ही तरलता में बदलना शुरु करते हैं। रचना प्रक्रिया में वह कुछ बदलाव लाते हैं। कागज पर पहाड़ के एक ठोस व स्थिर आकार को वह स्याही से भरते नहीं हैं अपितु स्याही को इस तरह बरतते हैं कि दो ब्रश स्ट्रोक के बीच एक खाली जगह रह जाती है। यह खाली जगह इस ठोस संरचना को तरल बना देती है, उसमें अमूर्तन समाहित कर देती है। इस तरह की रचनाएं संप्रेषण में किसी छवि की सीमा को तोड़ देती हैं। इन रचनाओं में हमें कहीं–कहीं पहाड़ के साथ ही कई तरह की जैविक आकृतियों का आभास होता है। इन आकृतियों में मानवीय आकृतियों का आभास भी शामिल हैं।

भारतीय संस्कृति में पर्वतों को देवता माना गया है। यानी उनका अस्तित्व पत्थर, वनस्पति और बर्फ से ही नहीं है, उनका अस्तित्व स्पंदित जीवन की ग्रहणशीलता में भी है। एक संवेदनशील और कवि हृदय व्यक्ति के लिए पर्वत एक धड़कता हुआ तत्व हो सकता है। पहाड़ों के इस देवत्व यानी जीव रूप का दर्शन हमें भारतीय कला में पहाड़ों के अद्भुत चितेरे निकोलस रोरिख की रचनाओं में मिलता है। पर वह यह काम रंगों में करते रहे जबकि आशु शर्मा रंगों को कम ही हाथ लगाते हैं। फोटोग्राफी के उनके शौक ने उन्हें किसी भी दृश्य के विवरणात्मक और कथात्मक प्रभाव को आत्मसात करने का हुनर दिया है। इसी हुनर का इस्तेमाल वह स्याही से चित्र रचना करते समय करते हैं। चित्र में काली स्याही के स्ट्रोक्स के बीच जो खाली जगह होती है वह पहाड़ की गति का, उसकी धड़कन का रूपक है जो जीवन की संभावना का रूपक भी है। इस रूपक को पकड़ने के लिए आशु ने लंबे समय तक पहाड़ों की यात्रा की है। कितनी ही रातें उन्होंने पहाड़ों की गोद में खुले आकाश के नीचे बिताई हैं। उन रातों में उन्होंने एक तरफ आकाश में चांद–सितारों की अटखेलियों का आनंद रस ग्रहण किया तो साथ ही नीम अंधेरे और चांदनी में पर्वतों की बदलती रंगत को आत्मसात किया। उन्होंने पहाड़ का इतना जीया है कि अब वह उनसे अलग नहीं हो सकता। ऐसा लगता है जैसे वह हर समय उनके साथ होता है, उनसे बतियाता हुआ, उनके साथ यात्रा करता हुआ, उनके साथ धड़कता हुआ, और कभी–कभी गुनगुनाता हुआ भी।

पत्थरों की ठोस संरचना का गुनगुनाता हुआ, तरंगित होता हुआ रुपक आशु के रचना संसार में मिल जाएगा। यह रूपक काली स्याही के कामों में तो है ही, रंगीन स्याही और पेस्टल के कामों में भी है। जलरंग की जगह रंगीन स्याही आशु को पसंद है। फोटोग्राफी करते हुए श्वेत–श्याम फोटोग्राफ में रंग भरने के लिए जिस स्याही का इस्तेमाल किया जाता है, वह उन्हें हमेशा आकर्षित करती रही है। उसमें जो चमक है, जो ताजगी है, वह उन्हें अधिक लुभाती रही है। इसलिए जब उन्हें लगा कि पहाड़ों के रुपक को रंगों की भाषा में संप्रेषित करना है तो उन्होंने रंगीन स्याही का इस्तेमाल किया। इनमें पारदर्शिता नहीं है पर जिस प्रकार से उन्होंने आसमान में रंगों की छटा को, पृथ्वी की विविधवर्णी रंगत को रचा है, वह किसी कविता की तरह लगता है। पहाड़ में जीवन और कविता के साथ ही संगीत का रुपक किस तरह जड़ तत्व को भी चेतना में बदल देता है, यह हम आशु शर्मा के चित्र संसार में देख सकते हैं।

–डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज





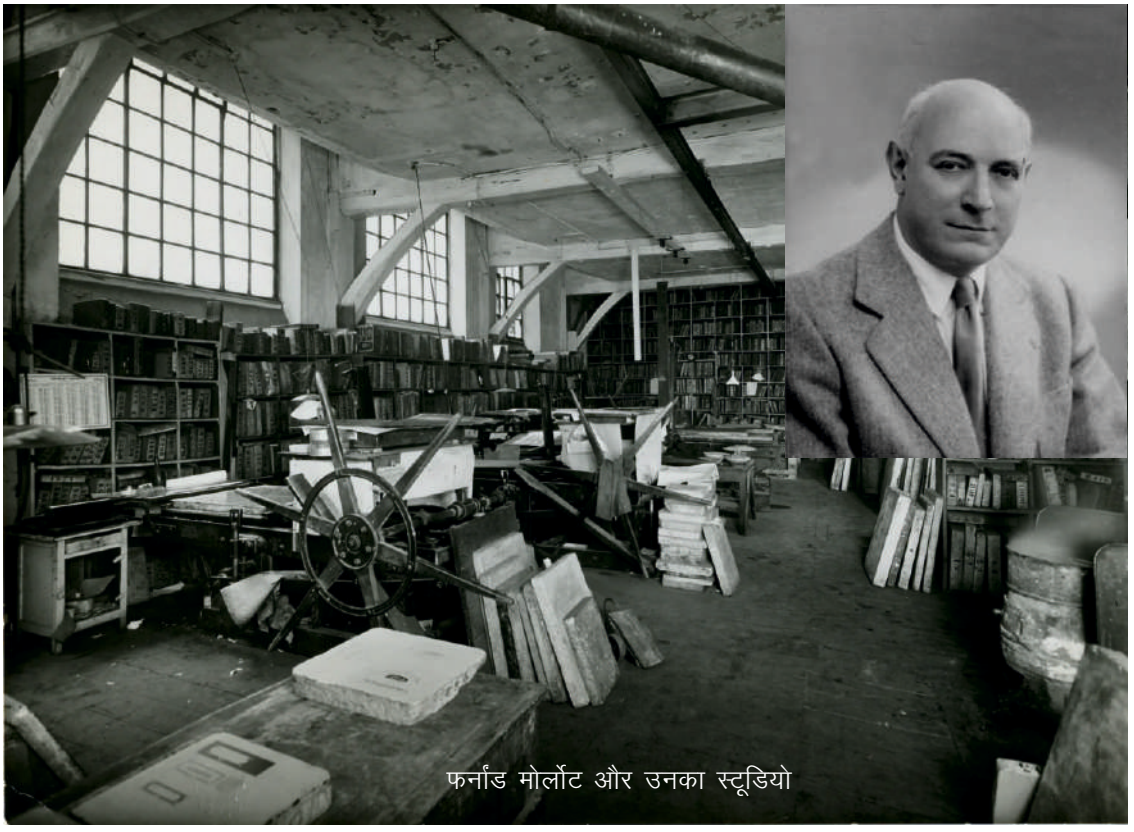






कला इतिहास

एटेलियर मोर्लोट



फर्नांड मोर्लोट और उनका स्टूडियो

एटेलियर मोर्लोट पेरिस का एक मशहूर प्रिंट स्टूडियो था, जिसकी स्थापना 1852 में फर्नांड मोर्लोट ने की थी। इस स्टूडियो ने एक कला के रूप में लिथोग्राफी के विकास में अहम योगदान दिया और 20वीं सदी के कुछ सबसे मशहूर कलाकारों के प्रिंट तैयार किए, जिनमें पाब्लो पिकासो, हेनरी मैटिस, जोन मिरो और मार्क शागल जैसे नाम शामिल हैं।

कला की दुनिया में एटेलियर मोर्लोट की भागीदारी 20वीं सदी की शुरुआत में तब शुरू हुई, जब फर्नांड मोर्लोट ने पेरिस की एक पुरानी लिथोग्राफिक वर्कशॉप से एक प्रिंटिंग प्रेस खरीदी। इस प्रेस का इस्तेमाल श्ले फिगारोश अखबार करता था, और मोर्लोट इसकी प्रिंटिंग की क्वालिटी से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अपनी खुद की कलाकृतियों को दोबारा बनाने के माध्यम के तौर पर लिथोग्राफी के साथ प्रयोग करना शुरू किया, और जल्द ही दूसरे कलाकारों के साथ मिलकर काम करने में उनकी दिलचस्पी बढ़ गई।

1920 के दशक में, एटेलियर मोर्लोट ने अलग–अलग तरह के कलाकारों को अपनी ओर आकर्षित करना शुरू किया, जिनमें आधुनिक कला आंदोलन की कुछ सबसे अहम हस्तियां भी शामिल थीं। इस स्टूडियो के साथ काम करने वाले शुरुआती कलाकारों में जॉर्ज रौल और अरिस्टाइड मैलोल शामिल थे। इसके बाद के सालों में, मार्क शागल और हेनरी मैटिस जैसे दूसरे कलाकारों ने भी नियमित तौर पर एटेलियर मोर्लोट के साथ काम करना शुरू कर दिया।

स्टूडियो की शोहरत बढ़ती गई, और 20वीं सदी के मध्य तक, यह यूरोप के सबसे बड़े प्रिंटमेकिंग स्टूडियो में से एक बन गया था। एटेलियर मोर्लोट की सफलता का एक कारण, कुछ हद तक, पारंपरिक लिथोग्राफिक तकनीकों के प्रति उसकी प्रतिबद्धता थी। स्टूडियो में बेहद कुशल कारीगर काम करते थे, जो कलाकारों के साथ मिलकर यह सुनिश्चित करते थे कि उनके प्रिंट बेहतरीन क्वालिटी के हों।

पाब्लो पिकासो के साथ एटेलियर मोर्लोट का सहयोग खास तौर पर अहम था। मोर्लोट और पिकासो ने पहली बार 1945 में साथ काम किया, और इसके परिणामस्वरूप बने प्रिंट इतने सफल रहे कि दोनों ने दो दशकों से भी ज्यादा समय तक साथ मिलकर काम करना जारी रखा। इस दौरान एटेलियर मोर्लोट और पिकासो द्वारा तैयार किए गए प्रिंट आधुनिक युग की कुछ सबसे मशहूर कलाकृतियों में से हैं।

कला की दुनिया में एटेलियर मोर्लोट की भूमिका सिर्फ लिथोग्राफी तक ही सीमित नहीं थी। इस स्टूडियो ने मूर्तिकला और टेपेस्ट्री जैसे दूसरे माध्यमों में भी कलाकारों के साथ काम किया। 1960 के दशक में, एटेलियर मोर्लोट ने फ्रांसीसी कलाकार जीन लुर्काट के साथ मिलकर टेपेस्ट्री की एक शृंखला पर काम किया, जिसे न्यूयॉर्क शहर के म्यूजियम ऑफ मॉडर्न आर्ट में प्रदर्शित किया गया था। 20वीं सदी के बाद के हिस्से में, एटेलियर मोर्लोट को काफी चुनौतियों का सामना करना पड़ा। प्रिंटिंग टेक्नोलॉजी में हुई तरक्की की वजह से पारंपरिक लिथोग्राफी की लोकप्रियता कम हो गई थी, और स्टूडियो को इस बदलाव के साथ तालमेल बिठाने में काफी मुश्किल हुई। 1985 में, स्टूडियो हमेशा के लिए बंद हो गया।

बंद होने के बावजूद, एटेलियर मोर्लोट लिथोग्राफी और प्रिंटमेकिंग के इतिहास का एक अहम हिस्सा बना हुआ है। क्वालिटी के प्रति स्टूडियो की लगन और आधुनिक दौर के कुछ सबसे बड़े कलाकारों के साथ उसके सहयोग ने प्रिंटमेकिंग को एक स्वतंत्र कला के रूप में स्थापित करने में मदद की। आज, एटेलियर मोर्लोट द्वारा बनाए गए प्रिंट्स को कलेक्टर्स और कला प्रेमियों, दोनों ही द्वारा बहुत ज़्यादा सराहा जाता है, और स्टूडियो की विरासत कला जगत को आज भी प्रभावित कर रही है।

कला विचार/ डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

राजेंद्र कडिया की कला
हावभाव और मौन के बीच

वरिष्ठ कलाकार राजेंद्र कडिया की रचनाओं में, काली स्याही और रंगों की प्रवाहमयी गति के साथ सशक्त, दृढ़ रेखाएँ कैनवास और कागज पर रहस्यमय छवियाँ उत्पन्न करती हैं। उनकी दृश्य भाषा सहजता और स्वाभाविक प्रवाह से उभरती है, जहाँ चित्रकारी एक पूर्व नियोजित रचना के बजाय एक ध्यानपूर्ण, सहज क्रिया बन जाती है। अक्सर एक ही आवेगपूर्ण रेखा से शुरुआत करते हुए, वे इसे सतह पर स्वतंत्र रूप से प्रवाहित होने देते हैं। जैसे–जैसे रेखा विकसित होती है, यह धीरे–धीरे एक ऐसी छवि को जन्म देती है जो जानबूझकर अस्पष्ट बनी रहती है–तत्काल पहचान का विरोध करती है और निरंतर जुड़ाव को आमंत्रित करती है।

वह मुख्य रूप से कागज पर ऐक्रेलिक और स्याही से काम करते हैं। वे पहले सतह–चाहे कागज हो या कैनवास, को गीला करते हैं, फिर रंग और स्याही को स्वाभाविक रूप से बहने देते हैं। वह शायद ही कभी पारंपरिक ब्रश का उपयोग करते हैं, इसके बजाय, लकड़ी के टुकड़े या मोटा कागज उनके उपकरण के रूप में काम करते हैं। इस अपरंपरागत दृष्टिकोण के माध्यम से, वह विभिन्न घनत्व और बनावट की रेखाएँ बनाते हैं, जिससे स्याही और पानी पारदर्शी परतों में विलीन हो जाते हैं जो रचना के भीतर सांस लेते हैं।

इस प्रक्रिया के दौरान, अनगिनत अज्ञात आकृतियाँ उभरने लगती हैं– मानो पेंटिंग स्वयं ही अपना अंतिम रूप निर्धारित कर रही हो। अमूर्त चेहरे अक्सर सामने आते हैं। प्रत्येक की अपनी एक विशिष्ट पहचान होती है, फिर भी यह पहचान शारीरिक संरचना में नहीं, बल्कि भावनात्मक उपस्थिति में निहित होती है। ऐसा लगता है कि चेहरे विशेषताओं के बजाय भावों को धारण किए हुए हैं।

कभी–कभी, ये आकृतियाँ स्थापत्य कला की झलक दिखाती हैं, कहीं–कहीं, वे जंगल की सघनता का आभास कराती हैं। कुछ कृतियों में, आकांक्षा अनियंत्रित घास की तरह बढ़ती हुई प्रतीत होती है, दूसरों में, एक नदी लयबद्ध गति से बहती हुई प्रतीत होती है। उनकी कला में एक गहन काव्यात्मक संवेदनशीलता व्याप्त है– एक ऐसी संवेदनशीलता जिसे आसानी से व्यक्त नहीं किया जा सकता। शायद यही शांत तीव्रता उनकी दिखने में सरल रचनाओं को अप्रत्याशित रूप से चुनौतीपूर्ण अनुभव बनाती है।

उभरती हुई आकृतियाँ मानव चेहरे, खंडित परिदृश्य, या समय और स्थान में विलीन होते स्थापत्य खंडहरों







के अवशेषों से मिलती–जुलती हो सकती हैं। ये परिवर्तनशील छवियाँ निरंतर परिवर्तन की अवस्था में विद्यमान रहती हैं, पहचान और अमूर्तता के बीच दोलन करती रहती हैं। राजेंद्र कडिया की कला में क्षणभंगुरता केंद्रीय भूमिका निभाती है, जो स्मृति की नाजुकता और जीवन के निरंतर प्रवाह दोनों को प्रतिबिंबित करती है। उनकी रचनाएँ तयशुदा कथाओं का विरोध करती हैं, बल्कि दर्शकों को अपनी भावनाओं और अनुभवों को चित्रों पर उतारने के लिए प्रोत्साहित करती हैं।

काला रंग उनका प्रमुख माध्यम बना हुआ है, जिसे वे रंग की अनुपस्थिति के रूप में नहीं, बल्कि गहराई और प्रतिध्वनि के क्षेत्र के रूप में अपनाते हैं। उनके हाथों में, काला रंग विभिन्न रंगों के स्पेक्ट्रम में विलीन हो जाता है, जो घने, प्रभावशाली स्ट्रोक से लेकर नाजुक, लगभग लुप्त हो जाने वाले निशानों तक फैला हुआ है। यह संयमित रंग संयोजन भावनात्मक तीव्रता को बढ़ाता है, यह सुनिश्चित करते हुए कि प्रत्येक भाव का मनोवैज्ञानिक महत्व हो। एकरंगी भाषा उनके काम को कालातीत गुणवत्ता प्रदान करती है, विकर्षणों को दूर करती है और ध्यान को रेखा, लय और आंतरिक तनाव की ओर निर्देशित करती है।

राजेंद्र कडिया की रचनाएँ अपने दृश्य प्रभाव से परे, मनोवैज्ञानिक भूभाग के रूप में कार्य करती हैं। वे बाहरी वास्तविकताओं के बजाय आंतरिक अवस्थाओं को व्यक्त करती हैं, चिंतन, एकांत, बेचैनी और आत्मनिरीक्षण को पकड़ती हैं। परतदार सतहें संचित स्मृति को समेटे हुए प्रतीत होती हैं, जो भेद्यता और अस्तित्वगत चिंतन को छूती हैं। उनकी छवियाँ कोई समाधान नहीं देतीं बल्कि, वे खुली रहती हैं, जीवन की अंतर्निहित अस्पष्टता को प्रतिबिंबित करती हैं।

दशकों के निरंतर अभ्यास के माध्यम से, राजेंद्र कडिया ने एक विशिष्ट दृश्य भाषा विकसित की है जो अनुशासन और स्वतंत्रता, संरचना और आकस्मिकता के बीच संतुलन बनाती है। अमूर्तता और प्रस्तुति के बीच की सीमा को मिटाकर, वे दर्शकों को एक अंतरंग संवाद में आमंत्रित करते हैं–एक ऐसा संवाद जो धीरे–धीरे सामने आता है, मौन, संकेत और रेखा की सूक्ष्म लय के माध्यम से अर्थ प्रकट करता है।

डेविड हॉक्नीः परिदृष्य देखने का नया नजरिया

विश्लेषण / डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

पिछले दिनों डेविट हॉक्नी (जन्म 9 जुलाई 1937) एक बार फिर चर्चा का विषय बने जब उन्होंने लंबे समय बाद एकबार फिर से इंग्लैंड लौटकर स्थानीय भूदृश्यों की दुनिया में प्रवेश किया और वह भी किसी बच्चे की तरह। पॉप आर्ट और भूदृश्यों की रचनाओं के साथ ही सेट डिजाइनिंग, फोटोग्राफी, प्रिंट मेकिंग सहित अनेक क्षेत्रों में सक्रिय रहे हॉक्नी ने 20वीं सदी के उत्तरार्द्ध और 21वीं सदी में उन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह प्रमाणित किया था कि हम प्रकृति को उस तरह एक बिंदु या एकरेखीय परिप्रेक्ष्य में कभी नहीं देखते, जैसा कि कला में माना जाता रहा है। दृश्यात्मक अनुभव का रूपांतरण करते हुए उन्होंने कैलिफोर्निया की धूप से भरी पहाड़ियों से लेकर यॉर्कशायर की शांत गलियों तक, अपनी विशिष्ट दृश्य भाषा, रंग योजना, परिप्रेक्ष्य और लगातार विकसित होते माध्यमों के प्रयोग के जरिये परिदृश्य को देखने के तरीके को नए ढंग से प्रस्तुत किया है। कैनवास पेंटिंग से लेकर आईपेड ड्राइंग तक, बच्चों की तरह कुछ रचने से लेकर संतुलित पूल चित्रों तक उनका रचना संसार हमेशा विविधतापूर्ण रहा है। उनके काम हमेशा से अवलोकन और स्मृति के बीच के सूत्रों को स्थापित करते रहे हैं।

उन्होंने कला में किसी परिदृश्य को देखने के एकरेखीय परिप्रेक्ष्य सिद्धांत को खारिज करते हुए उसे एक नये अनुभव के रूप में स्थापित किया जिसमें अलग–अलग परिप्रेक्ष्य और आयाम के दृश्य–अनुभव एक समग्र अनुभव में रूपांतरित हो जाते हैं। उदाहरण के लिए हम किसी भवन के सामने खड़े होकर देखें तो वह जैसा दिखाई देगा, ठीक वैसा ही उसे दायीं या बायीं तरफ से देखने पर दिखाई नहीं देगा। यह दृश्य का विचलन नहीं है, दृश्यात्मक अनुभव का एकाकीपन है, पर मनुष्य का दृश्यात्मक अनुभव कभी एकरेखीय नहीं होता। वह किसी भी परिदृश्य को एक आयाम के साथ देखते हुए भी उसके अन्य आयामों के बारे में सोच रहा होता है। उसका यह किसी भी वस्तु या व्यक्ति को विभिन्न आयामों के साथ देखना मानसिक दृश्यात्मकता है जो कभी एकरेखीय नहीं हो सकती। मनुष्य के एकरेखीय दृश्य अनुभव में उसके पूर्व के अनुभवों यानी स्मृतियों और कल्पना का आगमन बगैर किसी विशेष प्रयास के हो जाता है। हॉक्नी ने इसी बात को अलग तरह से अपने चित्रों के माध्यम से प्रमाणित किया। उनके अनेक चित्रों में हमें एक ही विषय का चित्रण मिलता है जिनमें परिप्रेक्ष्य बदल कर वह देखते और दिखाते थे कि कोई भी परिदृश्य कितना ऊर्जावान और विस्फोटक हो सकता है।

लगभग छह दशकों के अपने करियर में वह अपने व्यक्तिचित्र या पूलसाइड दृश्यों के लिए अधिक प्रसिद्ध रहे, पर उन्होंने अपने आसपास की दुनिया को निरंतर चित्रित किया– चाहे वह हॉलीवुड की पहाड़ियाँ हों या यॉर्कशायर का ग्रामीण परिदृश्य। हर बार उन्होंने परिचित दृश्यों को तीव्र रंगों, नवीन परिप्रेक्ष्यों और नई तकनीकों के माध्यम से एक अलग दृश्य अनुभव में रूपांतरित किया।

निकोलस कानयॉन (1980) उनकी वह रचना है जिसने देखने के पारंपरिक विचार को बदल दिया था। इस पेंटिंग में लॉस एंजिल्स का एक भूदृश्य है जिसमें घुमावदार सड़कों और पहाड़ियों का एक उज्ज्वल, पैचवर्क–सा दृश्य है, जहाँ तीव्र लाल, बैंगनी और हरा रंग एक साधारण शहरी घाटी को ऊर्जा से भर देते हैं। इसमें आकाशीय परिप्रेक्ष्य (एरियल व्यू) के साथ अतिरंजित वक्र पारंपरिक एक–बिंदु परिप्रेक्ष्य को चुनौती देते हैं, जिससे दर्शक की दृष्टि पूरे दृश्य में घूमती







रहती है। यही बहु–दृष्टिकोण बाद में उनकी कला की पहचान बन गया।

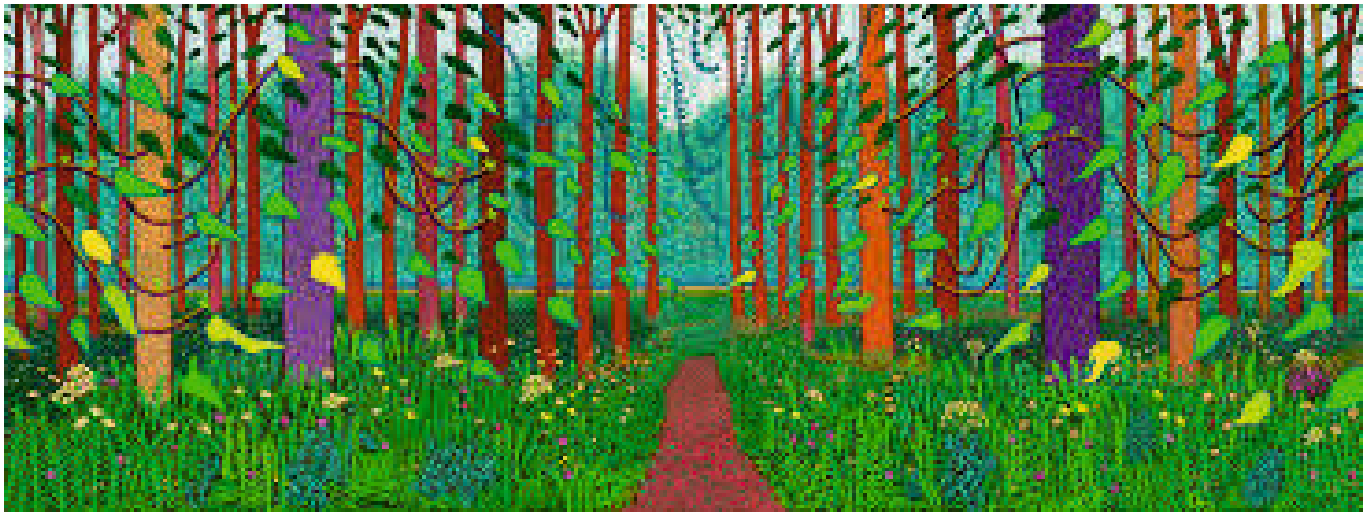
हॉक्नी लंबे समय से एक–बिंदु या एकरेखीय परिप्रेक्ष्य को अस्वीकार करते रहे हैं। घनवाद और मानवीय दृष्टि के अपने अध्ययन के आधार पर वह मानते हैं कि हमारी दृष्टि कभी स्थिर नहीं होती। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हमारी आँख हमेशा गतिशील रहती है, इसलिए पुनर्जागरण काल की कला में जो एक बिंदु परिप्रेक्ष्य की अवधारणा स्थापित की गई थी वह वास्तविक अनुभव को पकड़ने में अपर्याप्त है। वे मानते हैं कि हम परिदृश्य को किसी एक स्थिर बिंदु से नहीं, बल्कि उसके भीतर चलते हुए अनुभव करते हैं। इसलिए उन्होंने एक ऐसी दृष्टि विकसित की, जिसमें एक ही चित्र में अनेक दृष्टिकोण और समय के क्षण समाहित होते हैं। इस काम के लिए उन्होंने कोलाज तकनीक का भी प्रयोग किया।

यह विचार उनकी फोटो–कोलाज कृतियों, जैसे Merced River] Yosemite Valley (1983), में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। कई तस्वीरों को जोड़कर बनाए गए ये चित्र जानबूझकर खंडित होते हुए भी एक समग्र अनुभव प्रस्तुत करते हैं। यह कैमरे की एकल दृष्टि को चुनौती देते हैं और वास्तविक जीवन में अनुभव किए जाने वाले स्थान की अधिक समृद्ध अनुभूति प्रदान करते हैं।

हॉक्नी का मानना है कि ड्राइंग हमें अधिक स्पष्ट रूप से देखना सिखाती है। घास की बनावट, पानी पर प्रकाश का खेल, और पेड़ों के विशिष्ट आकारकृये सब प्रकृति के गहन अवलोकन से उत्पन्न होते हैं, चाहे उन्हें प्राकृत्रिक रंगतों के साथ या भिन्न रंग योजना के साथ रचा गया हो, या सरल रूपों में क्यों न प्रस्तुत किया गया हो। इस तरह, वे परिदृश्य चित्रकला की उस परंपरा को आगे बढ़ाते हैं, जो हमें यह सिखाती है कि कला हमारे दैनिक अनुभवों में छिपे गहरे सत्य को उजागर कर सकती है।

2000 के दशक में उन्होंने उत्तरी इंग्लैंड के यॉर्कशायर वोल्ड्स में अपनी जड़ों की ओर एक उल्लेखनीय वापसी की। कैलिफोर्निया में दशकों बिताने के बाद, वे ब्रिडलिंगटन के आसपास के शांत ग्रामीण क्षेत्र की ओर लौटे, वही इलाका जहाँ उनका बचपन बीता था। इस वापसी ने उनकी





सृजनात्मक ऊर्जा को एक नए स्तर पर पहुँचा दिया। उन्होंने स्थानीय पेड़ों, सड़कों और जंगलों को उसी उत्साह से चित्रित किया, जैसे उन्होंने लॉस एंजिल्स के स्विमिंग पूलों के चित्र बनाये थे।

अक्सर खुले वातावरण में काम करते हुए, उन्होंने यॉर्कशायर के बदलते मौसम और वातावरण को उसी क्षण में दर्ज करने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप एक विशाल और प्रभावशाली कृतिसमूह सामने आया, जिसने समकालीन समय के लिए ब्रिटिश परिदृश्य चित्रकला को नए ढंग से परिभाषित किया। इस दौर का एक प्रमुख रूपक है–घुमावदार ग्रामीण सड़क, जो परिदृश्य के भीतर से गुजरती है। पारंपरिक फीकी सर्द धूप से अलग, चमकीले रंगों के प्रयोग के माध्यम से हॉक्नी ने इस क्षेत्र की सुंदरता को नए रूप में प्रस्तुत किया। इंप्रेशनिस्ट कलाकारों की तरह, वे केवल दृश्य यथार्थ नहीं, बल्कि स्थान की अनुभूति और भावना को चित्रित कर रहे थे।

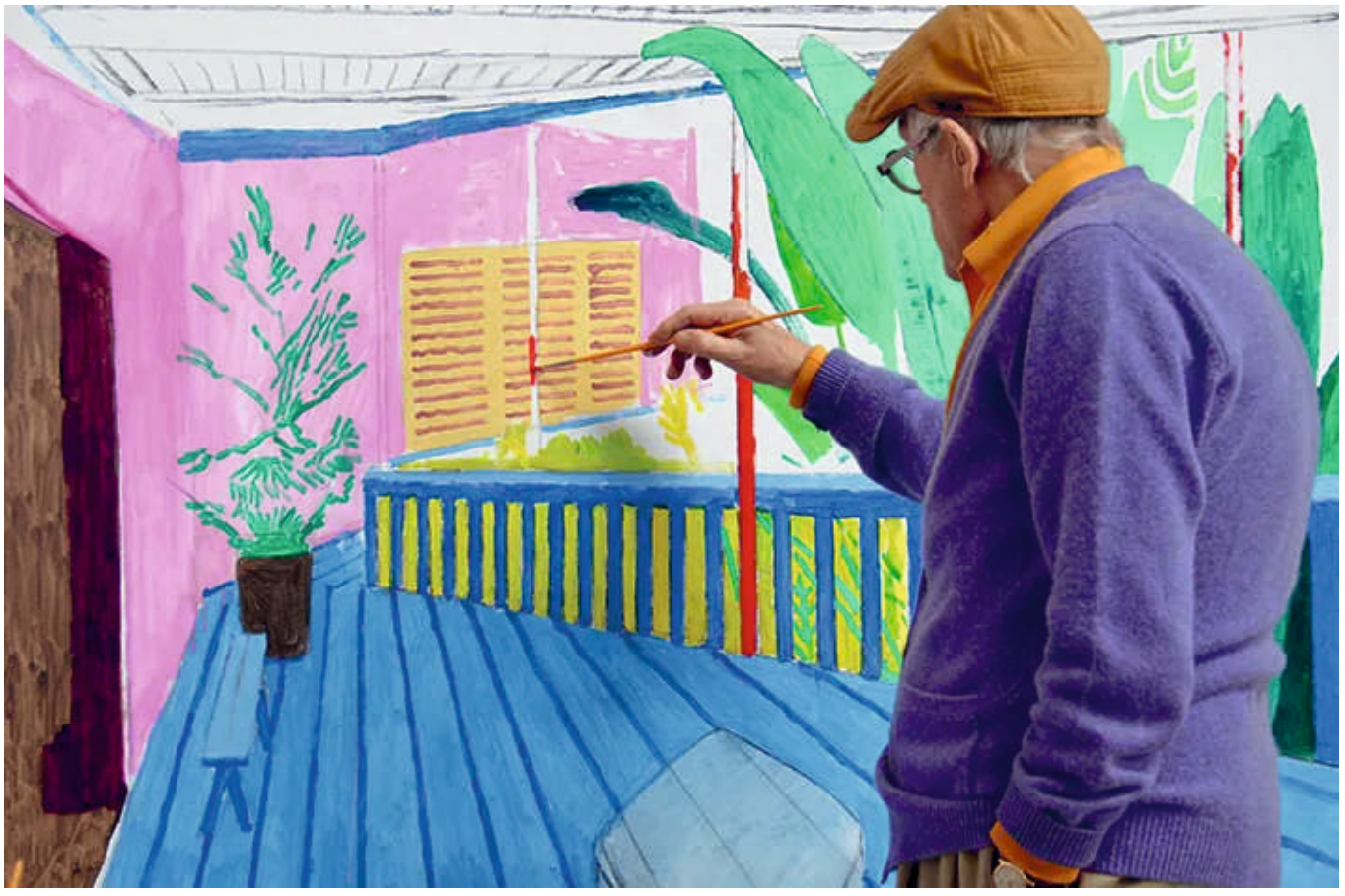
इस यॉर्कशायर काल की एक महत्वपूर्ण परियोजना है The Arrival of Spring in Woldgate] East Yorkshire, जिसे पूरी तरह आईपैड पर बनाया गया। 2011 में, उन्होंने जनवरी से मई तक वसंत ऋतु के क्रमिक आगमन को दर्ज किया–सर्दियों की नीरसता से लेकर मई की हरियाली तक। प्रत्येक डिजिटल ड्राइंग को तिथि के साथ अंकित किया गया और बाद में बड़े आकार में प्रिंट किया गया, जिससे यह श्रृंखला दिन–प्रतिदिन बदलते मौसम का दस्तावेज बन गई। 2025 में, इन प्रिंट्स की एक नीलामी में उल्लेखनीय सफलता मिली, जहाँ सभी कृतियाँ अपेक्षा से अधिक मूल्य पर बिकीं।

हॉक्नी के यॉर्कशायर परिदृश्य उनके कैलिफोर्निया के चमकदार दृश्यों से स्पष्ट रूप से भिन्न हैं। 1960 के दशक में लॉस एंजिल्स में उन्होंने धूप,



अवकाश और आधुनिक जीवनशैली को चित्रित किया–जैसे A Bigger Splash (1967) जहाँ यॉर्कशायर के चित्र ऋतुओं के सूक्ष्म बदलाव को दर्ज करते हैं, वहीं कैलिफोर्निया के चित्र प्रकाश और जीवन के आकर्षण को महिमामंडित करते हैं।

अपने करियर के उत्तरार्ध में, हॉक्नी ने डिजिटल माध्यमों को अपनाकर परिदृश्य कला को और विस्तारित किया। फैक्स मशीन से लेकर आईफोन और आईपैड तक, उन्होंने नए माध्यमों के प्रति अपने आकर्षण को बार–बार सिद्ध किया। इस डिजिटल प्रयोग ने न केवल उनके काम को नई दिशा दी, बल्कि 21वीं सदी के दर्शकों के लिए परिदृश्य को देखने के तरीके को भी प्रभावित किया। उनका डिजिटल पेंटिंग की ओर रुझान 2008 में शुरू हुआ, जब उन्होंने ब्रशेस (Brushes) नामक ऐप का उपयोग करते हुए आईफोन पर ड्राइंग बनाना

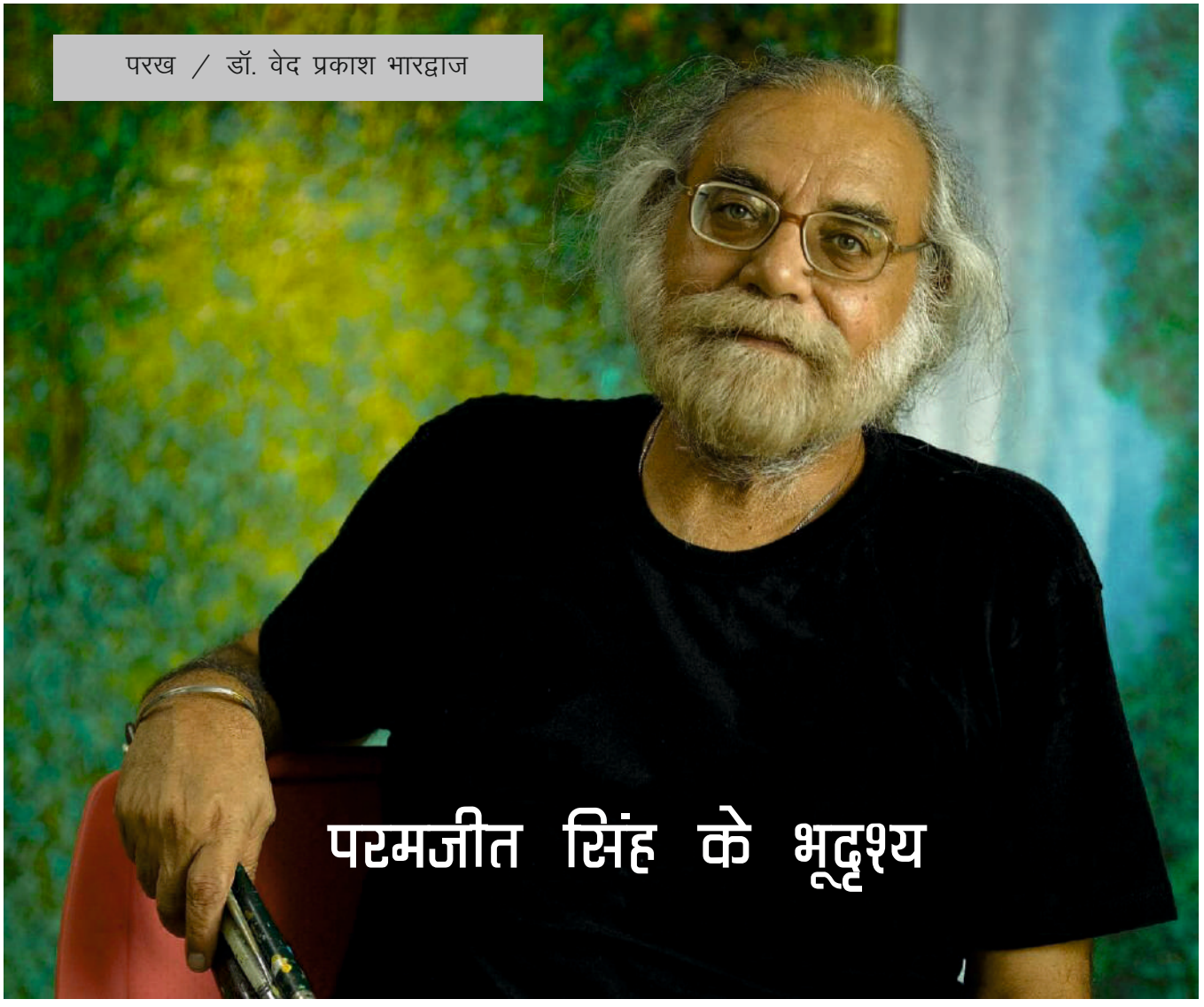


शुरू किया। 2010 में आईपैड के आने के साथ उन्हें एक बड़ा कैनवास मिला, और उन्होंने शीघ्र ही इस माध्यम की कलात्मक संभावनाओं को पहचान लिया। आईपैड और ब्रशेस ऐप के माध्यम से वे असीमित रंगों तक पहुँच सकते थे, बिना रंग सूखने का इंतजार किए तेजी से काम कर सकते थे, और स्क्रीन की रोशनी के कारण अंधेरे में भी चित्र बना सकते थे। इस माध्यम की गति और लचीलापन उनके उस पुराने आग्रह के अनुकूल था, जिसमें वे सीधे अवलोकन के बिना विलंब काम करना चाहते थे।

हॉक्नी ने यह सिद्ध किया कि टचस्क्रीन पर भी गंभीर कला संभव है, और इस तरह उन्होंने फाइन आर्ट की दुनिया में डिजिटल पेंटिंग को वैधता दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। 2011 में जब उन्होंने पहली बार अपने आईपैड ड्राइंग प्रदर्शित किए तो आलोचक और दर्शक उनकी चित्रात्मक गुणवत्ता और समृद्धता से आश्चर्यचकित रह गए। पिक्सेल्स से बने होने के बावजूद, उनमें हॉक्नी की विशिष्ट शैली स्पष्ट रूप से दिखाई देती थी। इसका एक कारण यह है कि उन्होंने आईपैड को भी पारंपरिक माध्यमों की तरह ही अपनाया। उनके अनुसार, देखने और ड्रॉ करने की प्रक्रिया में कोई अंतर नहीं है– यदि आप पूरे दिन आईपैड पर ड्रॉ करते हैं, तो सफाई की आवश्यकता नहीं होती, लेकिन देखने और बनाने की क्रिया वही रहती है।



पारंपरिक कलात्मक सिद्धांतों और आधुनिक तकनीक के इस संयोजन के माध्यम से हॉक्नी ने एक बार फिर यह बदल दिया कि हम परिदृश्य को कैसे देखते हैं। 2010 के दशक के मध्य तक, वे बहु–स्क्रीन वीडियो इंस्टॉलेशन की ओर भी बढ़े, जिनमें एक ही दृश्य को कई कैमरों से अलग–अलग कोणों से रिकॉर्ड किया गया–यह भी परिदृश्य को बहु–दृष्टिकोण से देखने का एक प्रयोग था। फिर भी, उनके आईपैड पर बनाए गए परिदृश्य सबसे अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुए, क्योंकि वे शास्त्रीय और समकालीन के बीच सीधा सेतु बनाते हैं। उन्होंने यह प्रमाणित किया कि सत्तर और अस्सी की उम्र में भी वह देखने के नए तरीकों की एक क्रांतिकारी अवधारणा का नेतृत्व कर सकते हैं।



परख / डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज

परमजीत सिंह के भूदृश्य

परमजीत सिंह आधुनिक भारतीय कला के प्रमुख कलाकार हैं जिन्होंने अपनी रचनाओं के माध्यम से प्रकृति के सौंदर्य और उसके देखे–अनदेखे पहलुओं को देखने व खोजने की एक नई दृष्टि दी है। वडेहरा आर्ट गैलरी द्वारा आयोजित उनकी एकल प्रदर्शनी भौगोलिक सीमांत (लिमिनल जिओग्रफ़िस) 27 फरवरी से 3 मार्च, 2026 तक नई दिल्ली के बीकानेर हाउस की मेन गैलरी में हुई। यह प्रदर्शनी वडेहरा आर्ट गैलरी, डिफेंस कालोनी, नई दिल्ली में 6 मार्च 2026 से उपलब्ध है।

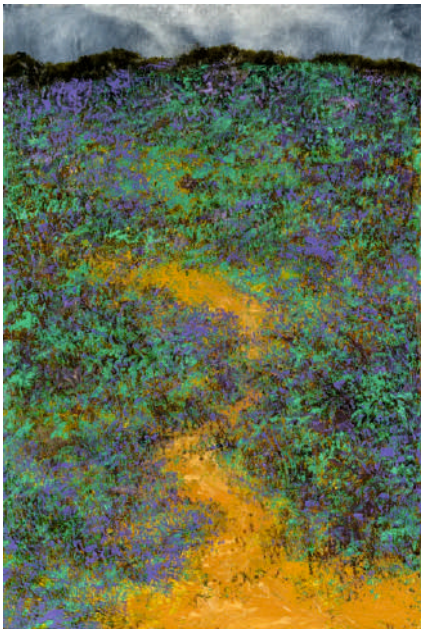
प्रकृति अपने स्वभाव में विविधता और रूपगत पूर्णता के साथ उपस्थित रहती है। वह एक साथ दृश्य और अदृश्य, ठोस और तरल, प्रकाश और छाया, विस्तार और रिक्ति का संगम है। प्रकृति के दो सीमांतों के बीच स्थिर दृश्य का चित्रण पेंटिंग में होता है पर उस स्थिर दृश्य में भी एक गति होती है। स्थिरता में हलचल का यह आभास परमजीत सिंह जैसे कलाकार के रचना संसार को महत्वपूर्ण बनाता है। अधिकांश कलाकार जब भूदृश्य रचते हैं, तो वे प्रकृति के प्रत्यक्ष, दृश्य और भौतिक रूप को केंद्र में रखते हैं – पेड़ों, आकाश, जल, क्षितिज और रंग–संयोजन के माध्यम से वे एक स्थल–विशेष का आभास निर्मित करते हैं। किंतु परमजीत सिंह उन विरल कलाकारों में हैं जो प्रकृति के सीमांत क्षेत्र को अपना विषय बनाते हैं। यह सीमांत क्षेत्र नहीं है, कोई भौगोलिक सीमा नहीं है, यह दृश्य में उपस्थित भाव, स्मृति और अनुभूति का वह प्रदेश है जहाँ दृश्यात्मक अनुभव आंतरिक स्पंदन में परिवर्तित हो जाता है। स्थिर भू–दृश्य को रंगों के प्रत्यावर्तन और प्रकाश व छाया के खेल से वह स्थिर नहीं रहने देते।

उनके चित्रों में प्रकृति का उजास चकाचौंध पैदा नहीं करता, बल्कि एक मद्धिम, आत्मीय आलोक में प्रस्फुटित होता है। यहाँ प्रकृति दृश्य–सौंदर्य का प्रदर्शन नहीं करती, वह आत्मसंवाद का माध्यम बनती है। दर्शक जब उनके कैनवास के सामने खड़ा होता है, तो वह किसी विशिष्ट स्थल पर नहीं, बल्कि एक मानसिक क्षेत्र में उपस्थित होता है। एक मानसित क्षेत्र जो कल्पना और यथार्थ से एकसाथ संवाद करता है, जिसमें प्रकृति के सादृश्य रुपों की विपुलता के



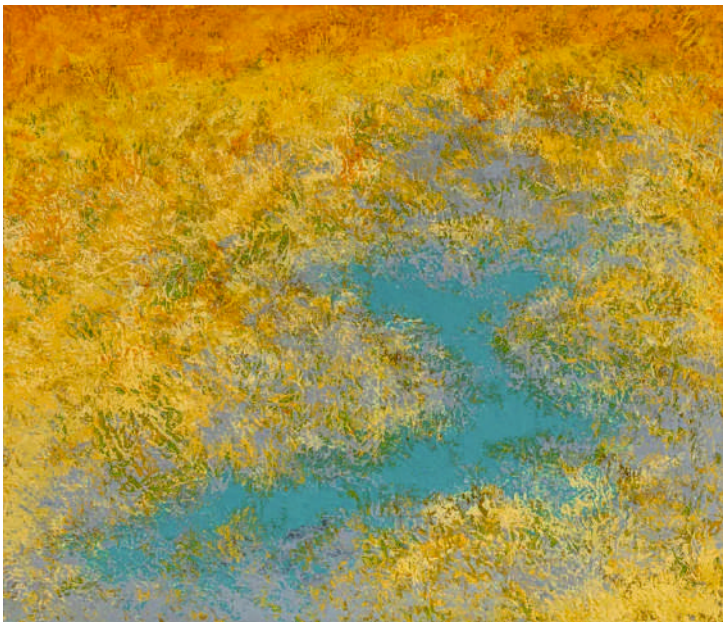
बोध के बीच एकांत उपस्थित रहता है, जहां मौन एक संवाद है, और आंतरिक शांति, जिसमें अदृश्य हलचलें प्रकृति के निरंतर परिवर्तित स्वरूप को दर्शाती हैं। उनकी पेंटिंग्स सिर्फ दृश्य नहीं हैं, एक संकेत है, एक मौन संवाद है।

परमजीत सिंह की कला में प्रकाश और छाया केवल तकनीकी तत्व नहीं हैं, वे संरचना के दार्शनिक आयाम हैं। प्रकाश यहाँ किसी क्षणिक चमक का संकेत नहीं देता, बल्कि वह समय की गहराई का वाहक है। छाया दृश्य को ढँकती नहीं, बल्कि उसे विस्तार देती है। यह अंतःक्रिया दृश्य को उसके प्रत्यक्ष यथार्थ से अलग एक दूसरे स्तर पर स्थापित कर देती है, जहाँ बाह्य वस्तु का अस्तित्व उसके आंतरिक अर्थ में रूपांतरित हो जाता है। इससे उनकी रचनाओं में एक तरह की नाटकीयता जन्म लेती है। घने जंगलों की दुनिया में किसी एक जगह पर प्रकाश का प्रभाव या प्रकाशित मार्ग की अनुभूति, या पेड़ों के बीच से झांकता प्रकाशित आकाश, कहीं घने पेड़ों के बीच से आलोकित होता कोई एक अलग रंग, यह सब परमजीत सिंह की कला को रहस्यमय बनाता है, और



शायद यही उनकी कला का सौंदर्य है कि वह सिर्फ सुंदर नहीं है, अनुभव नहीं है, वह चेतना का विस्तार भी है। उनकी एकल प्रदर्शनी, भौगोलिक सीमांत (लिमिनल जिओग्रफ़िस) में प्रकाश और छाया की चंचल गतिशीलता अपेक्षाकृत कम है, उसकी जगह स्थिरता अधिक दिखाई देती है। उनकी नई रचनाओं में वैसा आलोड़न नहीं है जो पहले हुआ करता था। इन चित्रों को देखकर किसी संत की संयमित और स्थिर साधना का बोध होता है, जैसे कोई गायक एक सुर पर स्थिर हो गया है। यहाँ कोई तीव्र नाटकीयता नहीं, कोई आकस्मिक झिलमिलाहट नहीं, बल्कि एक संयत, स्थिर और ध्यानपूर्ण आलोक है। यह स्थिरता दृश्य को कालातीत बनाती है। ऐसा लगता है जैसे समय ने स्वयं को विराम दे दिया हो और दृश्य किसी आंतरिक शांति में स्थिर हो गया हो।

परमजीत सिंह की





रचना–प्रक्रिया बहुस्तरीय है। वे कैनवास पर अनेक परतों में कार्य करते हैं, रंग की पारदर्शिता, अपारदर्शिता, मद्धिमता और उजास के सूक्ष्म संतुलन के साथ। यह परत–दर–परत निर्मिति चित्रों में केवल भौतिक गहराई नहीं लाती, यह अनुभव की गहराई भी रचती है। दर्शक जब चित्र को देखता है, तो उसकी दृष्टि सतह पर नहीं रुकती, वह भीतर उतरती जाती है।

यह विधि स्मृति की संरचना से मिलती–जुलती है। जैसे स्मृतियाँ एक–दूसरे पर आच्छादित होती हुई वर्तमान अनुभव को आकार देती हैं, वैसे ही विभिन्न रंगों की परतें दृश्य को उसके अंतिम रूप तक पहुँचाती हैं। परिणाम स्वरूप, चित्र केवल एक दृश्य नहीं रहता, वह एक मानसिक परिदृश्य बन जाता है।

परमजीत सिंह की रचनाओं में मानव की अनुपस्थित के बाद भी उसकी उपस्थिति का आभास बना रहता है। यह अनुपस्थिति उनकी कला का एक महत्वपूर्ण वक्तव्य है। यहाँ मनुष्य प्रकृति पर आधिपत्य स्थापित करने वाला प्राणी नहीं, बल्कि उसके मौन विस्तार में विलीन एक चेतना है। एक आध्यात्मिक चेतना जो मनुष्य को देह की भौतिकता से मुक्त करती है। यह दृष्टि समकालीन समय की प्रकृति में हस्तक्षेपकारी प्रवृत्तियों के विपरीत एक संतुलित, विनम्र और आत्मसंयत दृष्टिकोण प्रस्तुत करती है।

उनकी रचनाएँ किसी विशिष्ट सामाजिक–राजनीतिक वक्तव्य का प्रत्यक्ष उद्घोष नहीं करतीं, परंतु वे एक गहरी सांस्कृतिक संवेदना का संकेत अवश्य देती हैं, जहाँ प्रकृति को उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि अनुभव की भूमि माना जाता है।

परमजीत सिंह के भूदृश्य दृश्य–यथार्थ के पुनरुत्पादन से आगे बढ़कर अनुभूति के आंतरिक भूगोल का मानचित्र तैयार करते हैं। वे प्रकृति को देखने का एक ऐसा तरीका प्रस्तुत करते हैं, जिसमें दृश्य और अदृश्य, प्रकाश और छाया, स्थिरता और गतिशीलता, सतह और गहराई–सभी मिलकर एक ध्यानात्मक अनुभव रचते हैं।



उनकी कला हमें यह याद दिलाती है कि प्रकृति का सीमांत बाहर नहीं, भीतर है। उसे देखने के लिए आँख से अधिक संवेदना की आवश्यकता है। और शायद यही उनकी कृतियों की सबसे बड़ी उपलब्धि है कि वे दर्शक को केवल देखने नहीं, बल्कि ठहरकर अनुभव करने के लिए आमंत्रित करती हैं।





सतीश गुजराल

स्वतंत्रता के बाद भारतीय कला जगत में जिन कलाकारों ने अपना अलग मुकाम बनाया उनमें सतीश गुजराल का नाम प्रमुखता से लिया जाएगा। जेजे स्कूल ऑफ आर्ट, मुंबई में प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट ग्रुप से अलग, एक भारतीय आधुनिकता को गढ़ने में उन्होंने अधिक रुचि दिखाई। 1947 के विभाजन के समय उनका परिवार भारत आया। बचपन में एक दुर्घटना के कारण सतीश गुजराल सुनने की क्षमता खो चुके थे, इसलिए उन्होंने कला को चुना जिसमें सुनने से अधिक देखने का महत्व है। उनकी एक बड़ी प्रदर्शनी रसेल गुजराल ने 1 से 15 फरवरी 2026 तक दिल्ली के बीकानेर हाउस में आयोजित की। इस प्रदर्शनी में उनके कई पुराने काम भी प्रदर्शित किये गये। प्रदर्शित रचनाओं में उनका एक पोर्ट्रेट भी था। इस प्रदर्शनी में कुछ पुराने कामों के माध्यम से उनकी अमूर्त रचनाओं को देखने का अवसर मिला। सतीश गुजराल ने जेजे स्कूल के बाद कुछ अमूर्त चित्र रचे थे पर उनकी स्वाभाविक रुचि मानव अस्तित्व में ही रही। मैक्सिको की यात्रा के बाद उनकी कला में एक परिवर्तन आया। उससे पहले विभाजन की त्रासदी को लेकर उनकी पेंटिंग्स अपनी पहचान बना चुकी थीं। पर बाद में उन्होंने मानवीय जीवन में नाटकीयता और सौंदर्य को प्रधानता दी।





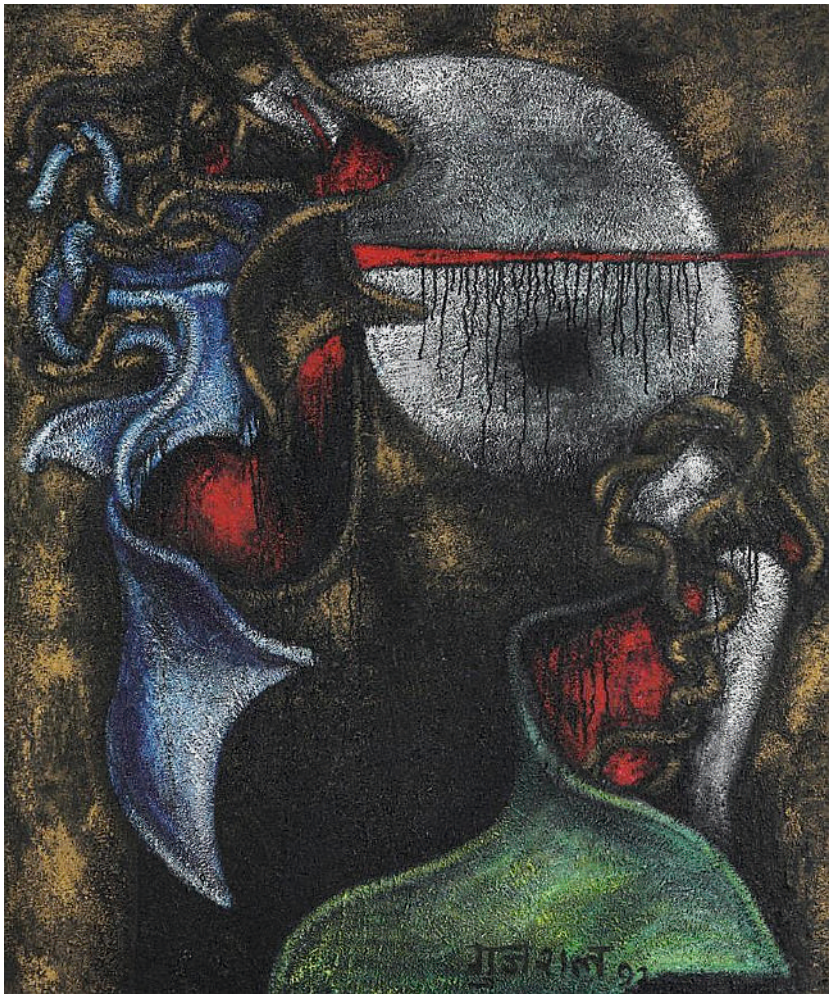
उनकी चित्र रचनाओं का एक आयाम उसका टैक्सचर रहा। वह कैनवास पर अक्सर दानेदार सतह की रचना कर उस पर पेंटिंग करते थे। इससे चित्रों में एक अलग आयाम उत्पन्न हो जाता था।

लकड़ी को जलाकर बनाई गई उनकी रचनाओं ने अलग पहचान बनाई। उनकी चित्र रचनाओं का एक आयाम उसका टैक्सचर रहा। वह कैनवास पर अक्सर दानेदार सतह की रचना कर उस पर पेंटिंग करते थे। इससे चित्रों में एक अलग आयाम उत्पन्न हो जाता था। यह टैक्सचर संभवतः आर्किटेक्चर से आया जिसमें उनकी गहरी रुची थी।

उनका जन्म 1925 में पंजाब के झेलम में हुआ था, जहाँ उन्होंने सुनने की दिक्कत की वजह से अपने शुरुआती साल ड्रॉइंग बनाने और उर्दू लिटरेचर पढ़ने में बिताए। 1939 में, गुजराल ने लाहौर के मेयो स्कूल ऑफ आर्ट में दाखिला लिया। इसके बाद, 1944 में, वे बॉम्बे के जेजे स्कूल ऑफ आर्ट चले गये गए, जहाँ वे प्रोग्रेसिव आर्टिस्ट्स ग्रुप (पीएजी) के सदस्यों से मिले, जिसके फाउंडर एफ एन सूजा, एस एच रजा और एम एफ हुसैन शामिल थे। हालाँकि, गुजराल ने पीएजी के आधुनिकता के मानक को रिजेक्ट कर दिया, जो यूरोपियन सोच और टेक्नीक से प्रेरित था। इसके बजाय उन्होंने पारंपरिक भारतीय पहचान की तलाश को प्राथमिकता दी। 1952 में, गुजराल को मेक्सिको सिटी के पैलेसियो डी बेलास आर्टेस में पढ़ने के लिए स्कॉलरशिप मिली, जहाँ उन्होंने मशहूर आर्टिस्ट डिएगो रिवेरा और डेविड अल्फारो सिकिरोस के साथ अप्रेंटिस के तौर पर काम किया, जो उस समय म्यूरलिस्ट मूवमेंट के पायनियर थे। उनसे प्रेरित होकर, गुजराल ने भी खुद बड़े फ्रेस्को म्यूरल बनाने की शुरुआत की। मेक्सिको में कला के अध्ययन ने उनकी कला पर काफी प्रभाव डाला। उनके काम में टैक्सचर, कथात्मक संयोजन और त्रिआयामी प्रभाव की शुरुआत यहीं से मानी जाती है।



इसके बाद के दशकों में, गुजराल ने दुनिया भर में प्रदर्शनियां लगाईं और कई नेशनल और इंटरनेशनल अवॉर्ड जीते। उन्हें पेंटिंग और स्कल्पचर के लिए तीन बार नेशनल अवॉर्ड मिला, और 1999 में पद्म विभूषण से सम्मानित हुए दृ जो भारत का दूसरा सबसे बड़ा सिविलियन अवॉर्ड है। बेल्जियम सरकार ने उन्हें नई दिल्ली में बेल्जियम एम्बेसी डिजाइन करने के लिए 'ऑर्डर ऑफ द क्राउन' से





सम्मानित किया दृ यह एक ऐसी बिल्डिंग थी जिसे एक इंटरनेशनल जूरी ने 20वीं सदी की 1000 बेहतरीन बिल्डिंगों में से चुना था।

पेंटिंग के अलावा उन्होंने विभिन्न माध्यमों में शिल्पों की रचना की। उनके शिल्पों में पेंटिंग की ही तरह की गतिशीलता मिलती है। संगीत का भी उनकी रचनाओं में प्रभाव देखा जा सकता है, हालांकि वह स्वयं संगीत सुन नहीं सकते थे। उनकी पेंटिंग्स और शिल्पों में मानवीय आकार हों, या घोड़ा, वह कभी भी स्थिर दिखाई नहीं देता है, वह हमेशा एक्शन में दिखाई देता है। स्टिल इमेजेस उनके यहां तभी मिलती हैं जब वह स्थिर जीवन का चित्रण कर रहे होते थे। उनके रचना संसार में ऐसे चित्रों की संख्या भी बहुत है जिनमें काले रंग का प्रमुखता से प्रयोग किया गया है। उन्होंने ब्लैक मार्बल में शिल्प रचे हैं। काले रंग के प्रति उनके लगाव के पीछे शायद उनके विभाजन के अनुभव रहे। बाद में यह काला रंग उनकी रचनाओं में रहस्य को प्रकट करने का माध्यम बन गया। एक बार दिल्ली में ललित कला अकादेमी में अपनी बड़ी प्रदर्शनी में उन्होंने पूरी गैलरी को काले रंग से रंग दिया था।

—डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज





परिमल वाघेला की कला

संरचना, छवि और चेतना के बीच

परिमल वाघेला पेशे से एक सिविल इंजीनियर हैं, इसलिए यह स्वाभाविक है कि उनकी कला में संरचनात्मक तत्वों का विशेष महत्व हो। वे अपनी रचना के अंतिम परिणाम को लेकर अत्यंत सजग दिखाई देते हैं। वे अपनी कला को सरल शब्दों में "दृश्यात्मक उत्तेजना" के रूप में वर्णित करते हैं, जो किसी निश्चित अर्थ या संदेश से परे होती है—एक ऐसी अवस्था जिसमें दृश्य अनुभव ही प्रमुख हो जाता है। लेकिन प्रश्न उठता हैरू क्या उनकी कला वास्तव में अर्थहीन है? संभव है कि कलाकार किसी पूर्वनिर्धारित उद्देश्य—न अर्थ के स्तर पर और न ही संदेश के स्तर पर— के साथ शुरुआत करता हो, परंतु कोई भी सृजन बिना संदर्भ या उद्देश्य के अस्तित्व में नहीं आ सकता।



इस संसार में जो कुछ भी रचा गया है—ईश्वर द्वारा, प्रकृति द्वारा और फिर मनुष्य द्वारा— उसमें किसी न किसी प्रकार का उद्देश्य या अर्थ निहित होता है। यही कारण है कि प्रत्येक मानवीय क्रिया को सामान्यतः किसी न किसी इरादे, महत्व या आवश्यकता से प्रेरित माना जाता है।

जब हम परिमल वाघेला की पेंटिंग्स को देखते हैं, तो सबसे पहले हमारे सामने हमारे समकालीन समय की छवियाँ आती हैं, जो सूक्ष्म रूप से हमें संरचनात्मक सौंदर्य और बौद्धिक संलग्नता की ओर ले जाती हैं। भले ही कलाकार ने इन तत्वों को जानबूझकर "संकेत" के रूप में न रचा हो, फिर भी ऐसे दृश्य अंश अनुभव, संवेदना और जीवन के यथार्थ के बिना



उत्पन्न नहीं हो सकते।

एक पुरानी खिड़की, फल चाट की प्लेट, काँच के जार में संरक्षित वस्तुएँ, अस्त–व्यस्त तरीके से मोड़े हुए अखबार और उन पर छपा हुआ पाठ–ये सभी दृश्य घटक कभी भी पूरी तरह अर्थहीन या उद्देश्यहीन नहीं हो सकते। परिमल वाघेला जानबूझकर दर्शक को कोई व्याख्या नहीं देते। वे चाहते हैं कि चित्र केवल एक दृश्य अनुभव के रूप में अस्तित्व में रहे। फिर भी, विरोधाभास यह है कि वे अपनी रचनाओं में इतना कुछ शामिल कर देते हैं कि दर्शक निष्क्रिय या उदासीन रहने के बजाय सोचने, चिंतन करने और जुड़ने के लिए बाध्य हो जाता है। परिणामस्वरूप, उनकी कृतियों को देखते हुए हम एक साथ इतिहास और वर्तमान के क्षणों से गुजरते हैं, और अधिक जागरूक, चिंतनशील तथा सचेत बनते हैं।

अतियथार्थवाद (हाइपररियलिज्म) के इस दौर में वे अपनी कृतियों को यथार्थ और भ्रम के बीच एक तनाव के रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस आभासी युग में वास्तविकता और उसकी मात्र प्रतिकृति के बीच लगातार संघर्ष चलता रहता है। यह संघर्ष मानव मन को निरंतर विचलित करता है। कई मायनों में यह छवियों के युद्ध का युग हैकृजहाँ धारणाएँ दृश्य माध्यमों के माध्यम से निर्मित, नियंत्रित और परिवर्तित की जाती हैं। सत्ता संरचनाएँ, संस्थाएँ, बाजार और व्यक्ति–सभी इस जटिल प्रक्रिया में उलझे हुए हैं।



परिमल वाघेला इस संघर्ष को किसी स्पष्ट कथन या प्रत्यक्ष संदेश के माध्यम से व्यक्त नहीं करते। फिर भी, उनकी कृतियाँ वही हासिल करती हैं, जिससे वे स्वयं बचने का दावा करते हैं। किसी स्पष्ट कथा को थोपने से उनकी दूरी को एक प्रकार की कलात्मक विनम्रता के रूप में देखा जा सकता है। अंततः, उनकी सृजन प्रक्रिया का परिणाम उस सर्वोच्च लक्ष्य को प्राप्त करता है, जिसे किसी भी कला का उद्देश्य माना जा सकता हैकृएक सजग और सचेत मनुष्य की उपस्थिति और जागृति।

परिमल वाघेला की हाइपररियलिस्टिक पेंटिंग्स को समकालीन मीडिया परिदृश्य की एक आलोचनात्मक प्रतिक्रिया के रूप में भी समझा जा सकता है। वे जिन छवियों को अत्यंत सूक्ष्मता से पुनः निर्मित करते हैं–जो अक्सर फोटोग्राफ या माध्यमित वास्तविकताओं जैसी प्रतीत होती हैं–वे इस बात की ओर संकेत करती हैं कि आज वास्तविकता स्वयं ही दृश्य माध्यमों के माध्यम



से फिल्टर, निर्मित और नियंत्रित होती जा रही है।

यहाँ प्रिंट मीडिया का पतन केवल पाठकों की संख्या में कमी तक सीमित नहीं है, बल्कि यह पत्रकारिता की नैतिकता और मूल्यों के क्षरण से भी जुड़ा हुआ है। जैसे–जैसे जिम्मेदार रिपोर्टिंग के पारंपरिक रूप कमजोर होते जा रहे हैं, सूचना विकृति, सनसनीखेजी और प्रचार के प्रति अधिक संवेदनशील होती जा रही है। इस दृष्टि से "मीडिया का पतन" और "मीडिया युद्ध" अलग–अलग घटनाएँ नहीं हैं–वे परस्पर जुड़े हुए हैं। दोनों ही दर्शकों की धारणा को आकार देने, जनमत को दिशा देने और उन्हें पूर्वनिर्धारित कथाओं की ओर धकेलने की रणनीतियों से संबंधित हैं।

वाघेला की कला, माध्यमित छवियों की अत्यधिक स्पष्टता और चमक का अनुकरण करते हुए, इस स्थिति को उजागर करती हैरू जो "वास्तविक" प्रतीत होता है, वह वास्तव में अत्यंत सावधानी से निर्मित, मंचित या वैचारिक रूप से प्रभावित हो सकता है। इस प्रकार, उनकी पेंटिंग्स दर्शकों को केवल यह नहीं पूछने के लिए प्रेरित करती हैं कि वे क्या देख रहे हैं, बल्कि यह भी कि वे उसे किस प्रकार और क्यों उस विशेष तरीके से देखने के लिए प्रेरित किए जा रहे हैं।









सुमित्रा अहलावत की कला

स्त्री गरिमा का आख्यान

सुमित्रा अहलावत समकालीन भारतीय कला परिदृश्य की एक महत्वपूर्ण चित्रकार हैं, जिनकी कला में विषय–विविधता के साथ–साथ संवेदनात्मक गहराई भी दिखाई देती है। उनकी कला के दो प्रमुख आयाम स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आते हैं–पहला, स्त्री की गरिमामय उपस्थिति, सौंदर्य और आंतरिक शक्ति का चित्रणय और दूसरा, पौराणिक चरित्रों का सशक्त एवं भावपूर्ण रूपांकन। ये दोनों ही आयाम उनके सृजन संसार में समान रूप से सक्रिय रहते हैं और एक साथ विकसित होते दिखाई देते हैं। इन दो अलग–अलग विषयों



स्त्री–चित्रण उनकी कला का केंद्रीय पक्ष है, और इसमें भी वे दो भिन्न प्रवृत्तियों को अपनाती हैं। पहली प्रवृत्ति में वे स्त्रियों को पारंपरिक भारतीय परिधान और आभूषणों से सुसज्जित, अत्यंत भव्य और राजसी रूप में प्रस्तुत करती हैं। इन चित्रों में न केवल बाह्य सौंदर्य का चित्रण है, बल्कि स्त्री की गरिमा, आत्मविश्वास और सांस्कृतिक पहचान भी उभरकर सामने आती है। उनके चित्रों में वस्त्रों की बारीक सिलवटें, गहनों की चमक और चेहरे के भाव अत्यंत सूक्ष्मता से उकेरे जाते हैं, जो उनकी तकनीकी दक्षता को दर्शाते हैं।

उनके जीवन का प्रारंभिक दौर महाराष्ट्र में बीता, जहाँ उन्होंने अपनी कला शिक्षा प्राप्त की। महाराष्ट्र की सांस्कृतिक समृद्धि, वहाँ की पारंपरिक वेशभूषा, विशेषकर स्त्रियों के पहनावे और आभूषणों की विविधता ने उनके मन पर गहरा प्रभाव डाला। बचपन से ही उन्होंने जिस प्रकार वहाँ की स्त्रियों को सजी–धजी अवस्था में देखा, वह स्मृति उनके भीतर स्थायी रूप से अंकित हो गई और आगे चलकर उनकी कला का अभिन्न हिस्सा बन गई। यही





कारण है कि उनके चित्रों में पारंपरिकता और सौंदर्य का अद्भुत समन्वय दिखाई देता है।

जीवन के एक लंबे कालखंड में पारिवारिक और सामाजिक जिम्मेदारियों के कारण वे सक्रिय रूप से चित्रकला से दूर रहीं। यह अंतराल उनके कलात्मक जीवन में एक महत्वपूर्ण मोड़ की तरह है। बाद में उन्होंने रेखांकन कलाकार और डिजाइनर के रूप में कार्य करना शुरू किया, जिससे उनकी रेखा–प्रयोग की क्षमता, संरचनात्मक संतुलन और सूक्ष्म विवरणों को उभारने की दक्षता में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। यही अनुभव उनकी पेंटिंग्स में संयोजन की संतुलित संरचना और यथार्थपरक प्रस्तुति के रूप में स्पष्ट दिखाई देता है।

उनकी कला का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष हैकृसामान्य स्त्रियों का चित्रण। यहाँ वे राजसी वैभव से हटकर आम जीवन की स्त्रियों को अपना विषय बनाती हैं। इन चित्रों में उनकी दृष्टि अधिक संवेदनशील और मानवीय हो जाती है। विशेष रूप से हरियाणा की स्त्रियों के नृत्य करती हुई छवियाँ उनके कार्य में प्रमुखता से दिखाई देती हैं। चूँकि हरियाणा उनका गृह प्रदेश है, इसलिए वहाँ की लोकसंस्कृति, जीवनशैली और स्त्रियों की सहजता उनके चित्रों में स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त होती है। इन नृत्यरत स्त्रियों में ऊर्जा, लय और सामूहिक आनंद का सजीव चित्रण मिलता है।

इसके अतिरिक्त, वे अत्यंत साधारण जीवन जीने वाली स्त्रियों का भी चित्रण करती हैंकृऐसी स्त्रियाँ जो किसी विशेष आडंबर से रहित हैं, लेकिन अपने भीतर एक गहरी गरिमा और आत्मबल लिए होती हैं। इस प्रकार, उनकी कला में स्त्री का बहुआयामी रूप सामने आता हैकृकभी वह अलंकृत और राजसी है, तो कभी सहज, सरल और जीवन के यथार्थ से जुड़ी हुई।

माध्यम की दृष्टि से वे मुख्यतः ऑयल कलर में कार्य करती हैं, जो उन्हें परत–दर–परत काम करने की सुविधा देता है। इस तकनीक के माध्यम से वे अपने विषय को अधिक गहराई और प्रभाव के साथ प्रस्तुत कर पाती हैं। विशेष रूप से आभूषणों की चमक, वस्त्रों की बनावट और त्वचा के रंग–रूप को उभारने में यह माध्यम अत्यंत सहायक सिद्ध होता है। इसके अलावा, वे कागज पर चारकोल और मिक्स मीडिया का भी प्रयोग करती हैं, जहाँ उनकी रेखाओं की सशक्तता और अभिव्यक्ति की तीव्रता देखने को मिलती है।

समग्रतः, सुमित्रा अहलावत की कला स्त्री जीवन के विविध आयामोंकृसौंदर्य, गरिमा, परंपरा, संवेदना और यथार्थकृका एक संतुलित और प्रभावशाली चित्रण प्रस्तुत करती है। उनकी कृतियाँ न केवल दृश्य सौंदर्य का अनुभव कराती हैं, बल्कि दर्शक को भारतीय स्त्री के बहुआयामी स्वरूप से भी परिचित कराती हैं।

–डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज



विमला आर्ट फोरम की प्रदर्शनी 'माटी–।।।'

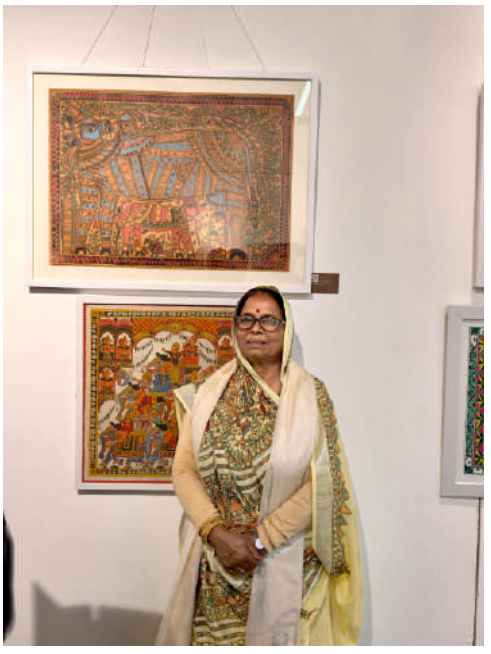
स्व की मिट्टी है कला

हम कलाकार क्या रचते हैं, क्यों रचते हैं, और जो हम रचते हैं क्या उसे वास्तव में कला कहा जा सकता हैकृये प्रश्न कला के आरंभ से ही उसके साथ जुड़े रहे हैं। ये प्रश्न केवल बाहरी दुनिया – आलोचकों, दर्शकों और संस्थाओं – से ही नहीं आते, बल्कि कलाकार की अपनी चेतना के भीतर से भी उत्पन्न होते हैं। एक कलाकार अक्सर स्वयं का पहला और सबसे कठोर प्रश्नकर्ता होता है। इसलिए सृजन की प्रक्रिया कभी भी संदेह से मुक्त नहीं होती, बल्कि वही संदेह उसे आकार देता है और तीक्ष्ण बनाता है। फिर भी, सदियों की कलात्मक खोज के बावजूद इन प्रश्नों के कोई अंतिम या निश्चित उत्तर सामने नहीं आए हैं। यह अनिश्चितता कला की सीमा नहीं, बल्कि उसकी सबसे बड़ी शक्ति है। यही उसे जीवंत, विकसित और गहराई से मानवीय बनाए रखती है।

इन प्रश्नों का अंतिम उत्तर न मिल पाने का कारण स्वयं कला की प्रकृति में निहित है। कला, अपने मूल में, स्व की खोज है। यहाँ "स्व" केवल सामाजिक या मनोवैज्ञानिक पहचान नहीं, बल्कि अस्तित्व की एक गहरी, जटिल आंतरिक सत्ता है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर स्मृतियों, भावनाओं, अनुभवों और अनुभूतियों की अनेक परतें होती हैं। इस आंतरिक क्षेत्र से, चाहे आंशिक ही सही, सामना होना एक गहन अनुभूति का क्षण होता है। एक कलाकार के लिए ऐसे क्षण सृजनात्मक ऊर्जा के स्रोत बन जाते हैं, जहाँ रचना का कार्य जानने की प्रक्रिया में बदल जाता है। इस प्रकार, कला की यात्रा स्व–खोज की यात्रा से अलग नहीं है।

इस दृष्टि से कला को इस आंतरिक स्व की "मिट्टी" के रूप में समझा जा सकता है। जिस प्रकार एक कुम्भकार सुंदर और





उपयोगी पात्र बनाने के लिए उपयुक्त मिट्टी पर निर्भर करता है, उसी प्रकार एक कलाकार अपने भीतर की गुणवत्ता और गहराई पर निर्भर करता है। हर प्रकार की मिट्टी से बर्तन नहीं बनाए जा सकते, उसमें संतुलन, बनावट और लचीलापन होना आवश्यक है। इसी तरह कलाकार के भीतर की दुनिया को भी विकसित, परखा और परिष्कृत करना पड़ता है। कुम्भकार बाहरी वातावरण से मिट्टी एकत्र करता है – एक ऐसा पदार्थ जो दृश्य और स्पर्शनीय है। लेकिन कलाकार एक आंतरिक स्रोत से काम करता है – एक अदृश्य, परंतु गहराई से अनुभूत होने वाली सत्ता, जो समस्त सृजन का आधार बनती है।

यह अंतर अत्यंत महत्वपूर्ण है। जहाँ कुम्हार शारीरिक श्रम के माध्यम से मिट्टी को आकार देता है, वहीं कलाकार अपने आंतरिक अनुभवों को उन रूपों में ढालता है जो दृश्य, श्रव्य, पाठ्य या प्रदर्शनात्मक हो सकते हैं। सृजन का कार्य इस प्रकार दृश्य और अदृश्य, ज्ञात और अज्ञात के बीच एक संवाद बन जाता है। इस आंतरिक मिट्टी को आकार देते हुए कलाकार केवल वस्तुएँ नहीं बनाता, वह अर्थों का निर्माण करता है, भावनाओं को जागृत करता है और चिंतन के नए मार्ग खोलता है। प्रत्येक कलाकृति कलाकार की सतत खोज का एक चिह्न बन जाती है – एक बड़े, निरंतर चलने वाले सफर का क्षणिक ठहराव।

इसी संदर्भ में विमला आर्ट फोरम जैसे मंचों का महत्व स्पष्ट होता है। ऐसे स्थल केवल प्रदर्शन के लिए नहीं होते, बल्कि वे ऐसे वातावरण बनाते हैं जहाँ कलाकार अपनी विकसित होती यात्राओं के अंश साझा कर सकते हैं। विमला आर्ट फोरम की वार्षिक प्रदर्शनी "माटी" इसी भावना का प्रतीक है। अब अपने तीसरे वर्ष में प्रवेश करते हुए "माटी– ।।।" अपने प्रारंभिक भारतीय लोक और आधुनिक कला के फोकस से आगे बढ़कर एक अंतरराष्ट्रीय मंच बन चुकी है। यह परिवर्तन केवल विस्तार का संकेत नहीं है, बल्कि संवाद की गहराई को भी दर्शाता है– परंपराओं, संस्कृतियों और कलात्मक दृष्टियों के बीच।

"माटी" शीर्षक स्वयं में अत्यंत प्रतीकात्मक है। मिट्टी एक ऐसा माध्यम है जो साधारण भी है और गहन भी। वह धरती से जुड़ी है, फिर भी अनंत रूपों में परिवर्तित हो सकती है। वह बिना प्रतिरोध के आकार स्वीकार करती है, परंतु तैयारी और देखभाल की माँग भी करती है। कई मायनों में, यह स्व की प्रकृति और कला की प्रकृति का ही प्रतिबिंब है। "माटी– ।।।" प्रदर्शनी इसी रूपक को आगे बढ़ाते हुए नए कलात्मक रूपों और विचारों को अपनाती है, परिवर्तन का स्वागत करती है, जबकि अपने मूल दर्शन में स्थिर रहती है।

इस वर्ष की प्रदर्शनी में दुनिया भर से विविध कलाकार शामिल हैं। अंतरराष्ट्रीय कलाकार जैसे ऐन मिशेल ब्रिलेट, डाइट मीना, बारबरा क्रिमेला, एवा हेल्ड, जीना एक्सलुंड, मार्क रेनर, जीतिन रंगेर, जीन चार्ल्स मिलेपिए और मार्टिन किंग अपने विशिष्ट सांस्कृतिक संदर्भों और व्यक्तिगत अन्वेषणों को प्रतिबिंबित करते हैं। इनके साथ आमंत्रित भारतीय कलाकार– कंचन मेहरा, बिपिन कुमार, जय त्रिपाठी, दिलीप शर्मा, ए.के. डगलस, अरविंद सिंह, डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज, रवि रंजन, दीप मनोहर, डॉ. प्रीति संयुक्ता, डॉ. विजय सिद्दारामप्पा हागरगुंडगी, प्रदीप एम और संजय कुमार सिंह आदि परंपरा और समकालीनता के बीच गहरे संवाद को प्रस्तुत करते हैं।

प्रदर्शनी में लोक कला को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है, जो उसकी निरंतर प्रासंगिकता और जीवंतता को स्वीकार करता है। वरिष्ठ कलाकार और पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त श्रीमती शांति देवी का कार्य पारंपरिक अभ्यासों की समृद्धि का प्रमाण है, जबकि श्रीमती विनीता देवी की पिड़िया पेंटिंग क्षेत्रीय कलात्मक भाषाओं की निरंतरता को दर्शाती है। अन्य कलाकार जैसे अभिराम दास, अनुशिखा जोशी, हेमा देवी, नरेंद्र कुमार पंजियारा, सजवा देवी, संध्या शुक्ला, संजय पनहाड़ और शिवन पासवान इस खंड को और विस्तृत करते हैं, यह दिखाते हुए कि लोक परंपराएँ स्थिर अवशेष नहीं, बल्कि जीवंत और विकसित होती अभिव्यक्तियाँ हैं।

इसके अतिरिक्त, प्रदर्शनी में अफनान रेयाज, अनीता जिंदल, दीपक, दृष्टि गुप्ता, कुलदीप डोगरा, मंजू ठाकुर, ऋतु जैन,

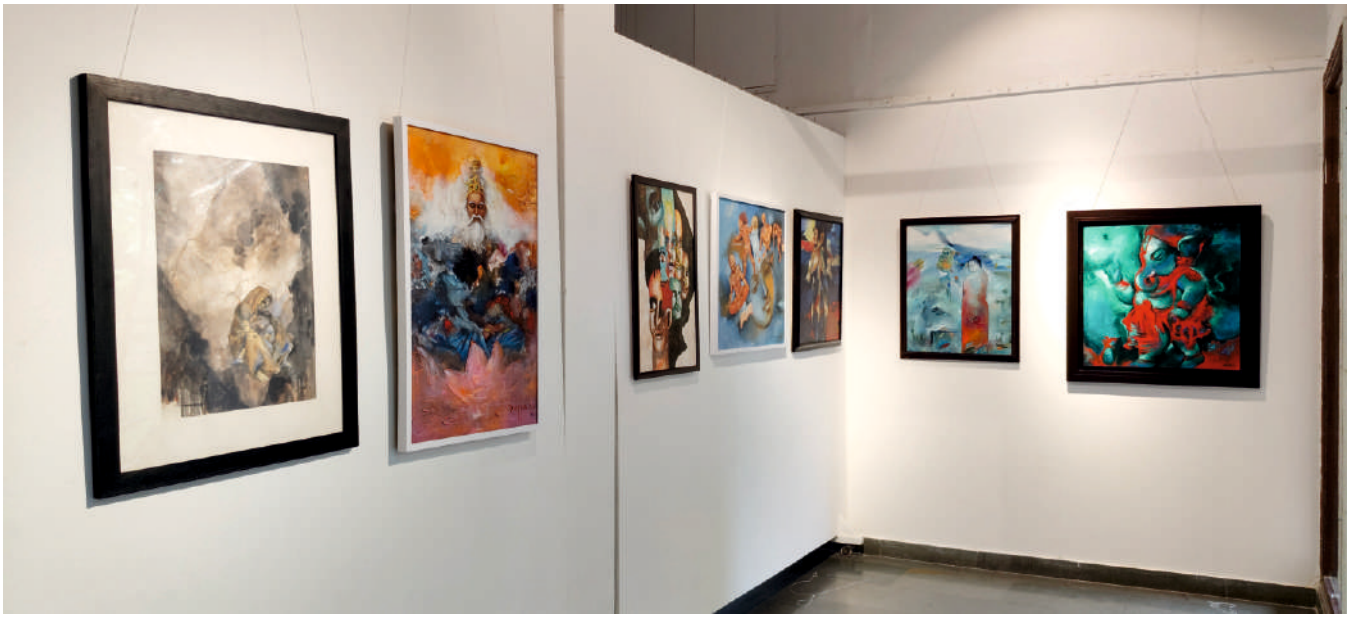




एस.डी. जोहरी और शैलजा जैसे अनेक कलाकार भी शामिल हैं, जो एक बहुआयामी कलात्मक परिदृश्य का निर्माण करते हैं। जब इन सभी कृतियों को सामूहिक रूप से देखा जाता है, तो एक गतिशील और समन्वित दृष्टि उभरती है। शैली, माध्यम और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि में भिन्नताओं के बावजूद, "स्व" की खोज एक साझा तत्व के रूप में सामने आती है। यह समानता एकरूपता नहीं लाती, बल्कि संवाद को जन्म देती है, जहाँ भिन्नताएँ अर्थपूर्ण बन जाती हैं। अंतरराष्ट्रीय कलाकारों के कार्यों में अक्सर पहचान के विखंडन, अस्तित्वगत अनिश्चितता और स्थापित रूपों पर प्रश्न उठाने जैसे विषय दिखाई देते हैं। कई मामलों में अमूर्तन प्रमुख माध्यम बन जाता है, जो कलाकारों को प्रत्यक्ष प्रस्तुति से आगे बढ़कर अधिक खुले और बहुअर्थी अर्थों के साथ काम करने की अनुमति देता है। कुछ कलाकार मानव आकृति को केंद्र में रखते हैं, परंतु यहाँ भी वह परिवर्तित, विकृत या विखंडित रूप में दिखाई देती है। यह दृष्टिकोण स्थिर पहचान से हटकर अधिक जटिल और बहुस्तरीय अस्तित्व की ओर संकेत करता है। जीवन को एक स्थिर संरचना के रूप में नहीं, बल्कि संभावनाओं, तनावों और अस्पष्टताओं के क्षेत्र के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।







इसके विपरीत, कई भारतीय कलाकार 'स्व' की खोज को शरीर की भौतिक उपस्थिति के माध्यम से व्यक्त करते हैं। श्रीमती कंचन मेहरा, दिलीप शर्मा, प्रदीप एम, दीप मनोहर, डॉ. प्रीति संयुक्ता और डॉ. विजय सिद्दारामप्पा हागरगुंडगी जैसे कलाकार शरीर को एक ऐसे स्थल के रूप में प्रस्तुत करते हैं जहाँ दृश्य और अदृश्य का संगम होता है। उनके कार्य यह संकेत देते हैं कि 'स्व' शरीर से अलग नहीं, बल्कि उसी में गहराई से निहित है। वहीं, बिपिन कुमार, जय त्रिपाठी, डॉ. वेद प्रकाश भारद्वाज और संजय कुमार सिंह जैसे कलाकार अमूर्तन के माध्यम से अनुभव के सार को पकड़ने का प्रयास करते हैं। उनके कार्य पहचान योग्य रूपों से आगे बढ़ते हुए नई दृश्य भाषाओं की खोज करते हैं। ए.के. डगलस का कार्य रूप और निराकार के साथ लोक कला को जोड़ते हुए एक रोचक संतुलन प्रस्तुत करता है, जबकि अरविंद सिंह का इंस्टॉलेशन दर्शकों की वास्तविकता की धारणा को चुनौती देते समकालीन परिदृश्य के प्रति आलोचनात्मक दृश्टिकोण विकसित करता है। वास्तविक और अवास्तविक के संयोजन के माध्यम से वे अनुभव की प्रकृति पर विचार करने को प्रेरित करते हैं। रवि रंजन की श्वेत–श्याम फोटोग्राफी एक अलग दृष्टि प्रस्तुत करती है, जहाँ रंगों की अनुपस्थिति रूप, प्रकाश और छाया की गहराई को उभारती है।



पूरी प्रदर्शनी में यह स्पष्ट होता है कि स्व की खोज अक्सर शरीर से प्रारंभ होती है। मानव आकृति, अपनी भौतिकता में, गहरे प्रश्नों का प्रवेश–द्वार बन जाती है। हाव–भाव, मुद्रा, विखंडन या अमूर्तन के माध्यम से कलाकार बाहरी से आंतरिक की ओर बढ़ने का प्रयास करते हैं। इस प्रक्रिया में शरीर स्वयं एक माध्यम बन जाता है। "माटी–।।।" केवल कलाकृतियों की प्रदर्शनी नहीं, बल्कि एक अनुभव का स्थल रही। यह देखने, सोचने और महसूस करने के विभिन्न तरीकों को एक साथ लाने तथा परस्पर संवाद का माध्यम बनी।



MAATI III

New Delhi



vimla art forum



Retd. Brig. Sanjiv Mehra
Chairman/Patron
Vimla Art Forum



Kanchan Mehra
Trustee/Founder
Vimla Art Forum



Dilip Kumar Sharma
President/Founder
Vimla Art Forum

Mob:7982582183 Email:vimlaartforum@gmail.com Web:vimlaartforum.com @vimlaartforum vimlaartforum